भारतीय वैश्विक परिषद्

फेज़ और नज़र से आगे

तुर्की पर भारत का दृष्टिकोण

भारतीय वैश्विक परिषद्
सप्रू हाउस, नई दिल्ली
2023

भारतीय वैश्विक परिषद्

फेज़ और नज़र से आगे

तुर्की पर भारत का दृष्टिकोण

भारतीय वैश्विक परिषद्

सप्रू हाउस, नई दिल्ली

2023

©आईसीडब्ल्यूए फरवरी 2023

अस्वीकरण: इन लेखों में विचार, विश्लेषण और सिफारिशें लेखक के हैं।

विषय-सूची

प्राक्कथन 5

भारत-तुर्की संबंध: नई शुरुआत की चिरकाल प्रतीक्षा.....7
राहुल कुलश्रेष्ठ

वैश्विक प्रतिष्ठा के लिए तुर्की का प्रयास: गठबंधन एवं प्रतिगठबंधन की राजनीति.....19
राहुल कुलश्रेष्ठ

एर्दोगन शासन के दो दशक के तहत तुर्की..... 33
फज्जूर रहमान सिद्दीकी

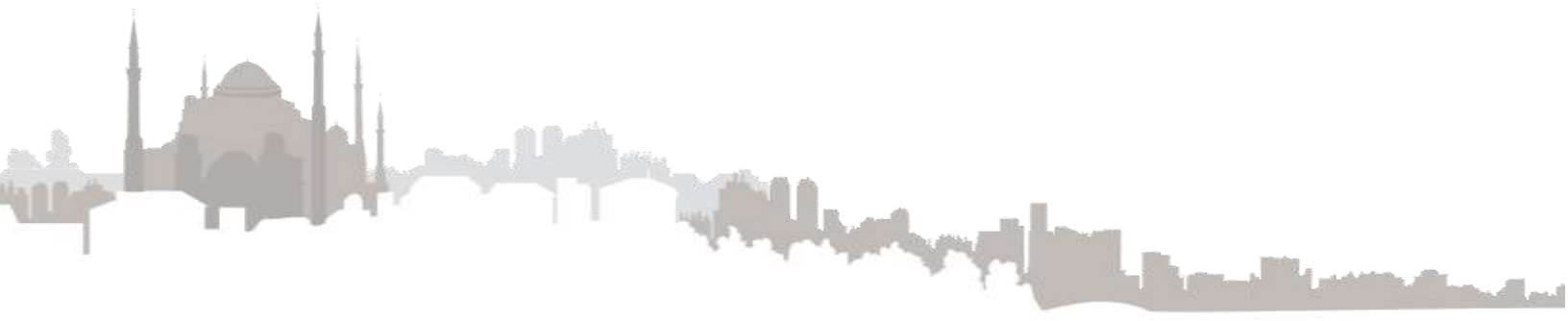

प्राक्कथन

पिछले दो दशकों में, तुर्की गणराज्य ने अपनी घरेलू राजनीति के साथ-साथ अपनी अर्थव्यवस्था पर एक स्पष्ट प्रभाव के साथ काफी उथल-पुथल वाले परिवर्तन देखे हैं। घरेलू मोर्चे पर, सरकार की संसदीय शासन प्रणाली, राष्ट्रपति प्रणाली की राजनीतिक व्यवस्था के रूप में परिवर्तित हो गई है और इसी तरह सेना की भूमिका में एक बड़ा बदलाव आया है। हाल के दिनों में, तुर्की की विदेश नीति में एक बड़ा बदलाव आया है, जिसके परिणामस्वरूप महत्वपूर्ण क्षेत्रीय और वैश्विक परिणाम सामने आए हैं। तुर्की में वर्ष 2002 में सत्ता में आयी जस्टिस एंड डेवलपमेंट पार्टी (ए.के.पी.) के शासन के बाद के वर्षों में ये परिवर्तन अधिक स्पष्ट थे। तुर्की की आंतरिक और बाहरी राजनीति के इस बदलते स्वरूप से क्षेत्रीय और वैश्विक राजनीति के एक नए परिवर्तन को बढ़ावा मिलने की संभावना है।

आईसीडब्ल्यूए द्वारा हालिया प्रकाशित पत्रों में राजदूत तुर्की में भारत के पूर्व राजदूत राहुल कुलश्रेष्ठ और परिषद में वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता डॉ. फज्जुर रहमान सिद्दीकी द्वारा रचित तीन पत्र शामिल हैं।
अपने पहले पत्र में, राजदूत राहुल कुलश्रेष्ठ ने तुर्की के साथ भारत के अतीत और वर्तमान संबंधों पर भारतीय दृष्टिकोण का एक व्यापक विवरण प्रस्तुत किया है। वह बताते हैं कि कैसे तुर्की ने शायद ही कभी स्वतंत्र रूप से या अपनी योग्यता के आधार पर भारत के साथ अपने संबंध बनाए, लेकिन भारत के साथ उसके संबंधों के सिद्धांत कई ज्ञात और अज्ञात कारणों से पाकिस्तान के साथ उसके संबंधों के बंधक बने रहे। अपने दूसरे पत्र में, राजदूत राहुल कुलश्रेष्ठ ने हमारे सामने तुर्की की विदेश नीति की एक विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की हैं, जो इसके क्षेत्रीय और वैश्विक जुड़ाव पर केंद्रित है। इसमें उन्होंने इस बात की गहराई से पड़ताल की है कि कैसे तुर्की अपनी स्वतंत्रता के बाद से अपनी भूस्थैतिक अवस्थिति के कारण अपनी विदेश नीति में हमेशा पश्चिम और पूर्व के बीच घूमता रहा। यह शोध-पत्र तुर्की की "पड़ोसी के साथ शून्य समस्या" की नीति और "रणनीतिक गहराई" के अपने सिद्धांत से हालिया बदलाव का एक विशद विवरण भी है। डॉ. फज्जुर रहमान सिद्दीकी का शोध-पत्र तुर्की में विशेष रूप से एकेपी के शासन के तहत और राष्ट्रपति एर्दोगन के 2002 में सत्ता में आने के बाद से वहाँ के आंतरिक राजनीति के विकास का कालक्रम है। उनका पत्र देश की आंतरिक राजनीति में आए उन विभिन्न मोड़ों की पड़ताल करता है जो तुर्की के अंदर एक बहुआयामी परिवर्तन पैदा कर रहे हैं।

इस वर्तमान अध्ययन का मुख्य उद्देश्य न केवल अतीत के तुर्की की जांच करना है, बल्कि यह भी पता

लगाना है कि कैसे तुर्की का नया नाम केवल एक मामूली परिवर्तन नहीं है, बल्कि एक परिवर्तन का प्रतिबिंब है जो वर्तमान में यह देश देख रहा है। यह खंड उसके क्षेत्र और उसके बाहर तुर्की की विदेश नीति के बदलते हुए स्वरूप की एक व्याख्या भी है। आई.सी.डब्ल्यू.ए. को उम्मीद है कि तुर्की पर यह विशेष प्रकाशन उन विद्वानों और पेशेवरों दोनों के लिए उपयोगी होगा जो तुर्की की राजनीति के आंतरिक और बाहरी स्वरूपों को समझना चाहते हैं।

विजय ठाकुर सिंह
महानिदेशक
भारतीय वैश्विक परिषद
सप्रू हाउस
फरवरी 2023

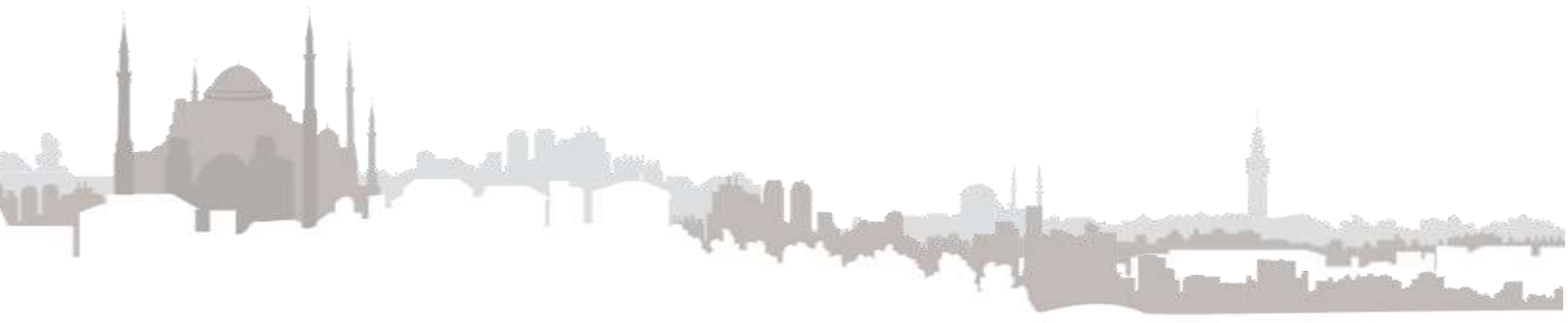

भारत-तुर्की संबंध

नई शुरुआत की चिरकाल प्रतीक्षा

राहुल कुलश्रेष्ठ

उज्बेकिस्तान में एससीओ शिखर सम्मेलन के हाशिये पर 16 सितंबर 2022 को प्रधानमंत्री मोदी और राष्ट्रपति एर्दोगन के बीच एक बैठक ने इस बात की काफी रुचि और अटकलें पैदा कीं कि क्या यह भारत और तुर्की के बीच समझ का एक मामूली हिस्सा होगा। भारत के विदेश मंत्रालय (एम.इ.ए.) ने एक प्रेस विज्ञप्ति में कहा कि, "दोनों नेताओं ने भारत-तुर्की संबंधों की समीक्षा की। उन्होंने यह नोट करते हुए कि दोनों देशों के बीच आर्थिक संबंधों, विशेष रूप से द्विपक्षीय व्यापार में हाल के वर्षों में वृद्धि हुई है, उन्होंने आर्थिक और वाणिज्यिक संबंधों को और बढ़ाने की क्षमता एवं संभावना को स्वीकार किया। दोनों नेताओं ने क्षेत्रीय और वैश्विक विकास पर भी विचारों का आदान-प्रदान किया। दोनों नेताओं ने न केवल द्विपक्षीय मुद्दों पर बल्कि क्षेत्रीय लाभ के लिए भी नियमित संपर्क बनाए रखने पर सहमति व्यक्त की।

चार दिन बाद, संयुक्त राष्ट्र महासभा (यूएनजीए) के 77वें सत्र में अपने संबोधन में तुर्की के राष्ट्रपति द्वारा फिर से कश्मीर का जिक्र किया गया। एर्दोगन ने कहा: "हमें खेद है कि भारत और पाकिस्तान के बीच एक मजबूत शांति और सहयोग उनकी आजादी के 75 साल बाद भी अभी तक स्थापित नहीं हुआ है। हम आशा करते हैं कि कश्मीर में न्यायोचित और स्थायी शांति कायम होगी।" जबकि भारतीय टिप्पणीकारों ने उल्लेख किया कि इस विषय पर पहले के कई बयानों के विपरीत उक्त उल्लेख का संदर्भ हल्का और यूएनएससी के संकल्पों में उल्लेख किए जाने योग्य नहीं था। राष्ट्रपति एर्दोगन, विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता ने इस संदर्भ में एक सवाल के जवाब में कहा: "तुर्की पर, जैसा कि आप जानते हैं, प्रधानमंत्री ने हाल ही में समरकंद में तुर्की के राष्ट्रपति के साथ एक उपयोगी बैठक की थी, और हमने यू.एन.जी.ए. और जम्मू कश्मीर के अलग-अलग मुद्दे पर एक प्रेस विज्ञप्ति भी जारी की थी कि .....यू मुझे लगता है कि हमारी पक्ष बहुत अच्छी तरह से ज्ञात है, लेकिन चूंकि आप चाहते थे कि हम इसे दोहराएं, मैं कह सकता हूं कि इस मुद्दे को निश्चित रूप से शिमला समझौते के अनुसार और द्विपक्षीय रूप से हल करने की जरूरत है और हमने हमेशा यह माना है। और आतंकवाद से मुक्त एक अनुकूल माहौल में भी चर्चा के हम पक्षधर हैं। मुझे लगता है कि हम सभी यह जानते हैं, और मुझे नहीं लगता कि संयुक्त राष्ट्र महासभा में जम्मू-कश्मीर का संदर्भ उपयोगी या सहायक है।" राष्ट्रपति एर्दोगन के बयान के तुरंत बाद भारत और तुर्की के विदेश मंत्रियों ने न्यूयॉर्क में वार्ता की, जिसमें, जैसा कि भारत के विदेश मंत्री ने ट्वीट किया, "एक व्यापक बातचीत थी जिसमें यूक्रेन संघर्ष, खाद्य सुरक्षा, जी20 प्रक्रियाएं, वैश्विक व्यवस्था, एन.ए.एम. (गुट-निरपेक्ष आंदोलन) और साइप्रस जैसे मुद्दे शामिल थे।" भारत और तुर्किए के बीच राजनयिक संबंध स्थापित होने के लगभग 75 साल बाद, अभी भी उनके बीच एक दूरदर्शी सफलता की तलाश है जो द्विपक्षीय संबंधों को अगले स्तर तक ले जाएगी।

उनके बीच लगभग 75 साल बाद राजनयिक संबंध स्थापित थे, भारत और तुर्की अभी भी एक दूरदर्शी सफलता की तलाश में हैं जो द्विपक्षीय संबंधों को अगले स्तर तक ले जाएगा।

स्टालिन ने पूर्वी तुर्की में क्षेत्रीय दावे किए थे और जलडमरूमध्य में अधिकारों की मांग की थी, जिसके कारण तुर्किए ने खुद को पश्चिमी गुट के साथ जोड़ लिया था। दूसरी ओर, नेहरू के अधीन भारत ने 'गुटनिरपेक्ष' नीति की वकालत की। दृष्टिकोणों का यह टकराव और रणनीतिक हितों के अभिसरण की कमी बांडुंग सम्मेलन (1955) में ही स्पष्ट हो गया था।

भारत-तुर्की संबंधों पर किसी भी निबंध के लिए ऐतिहासिक संबंधों की ओर इशारा करना सामान्य बात है। तुर्की शब्द जो 'हिंदुस्तानी' का हिस्सा हैं एक साझा मध्य एशियाई विरासत की ओर इशारा करते हैं। यह बहुत अतीत की बात नहीं है जब, भारतीय राष्ट्रवादी नेता, डॉ एम. ए. अंसारी ने बाल्कन युद्धों के बीच तुर्किए (1912) में एक चिकित्सा मिशन का नेतृत्व किया। हालांकि प्रथम विश्व युद्ध के दौरान भारतीय उपमहाद्वीप के सैनिकों को ऑटोमन साम्राज्य के खिलाफ बड़ी संख्या में सक्रिय रूप से तैनात किया गया था, तथापि खिलाफत आंदोलन के दौरान विजयी मित्र राष्ट्रों द्वारा ओटोमन सुल्तान के साथ किए गए व्यवहार का विरोध किया गया था। भारतीय राष्ट्रवादी मत तुर्की की स्वतंत्रता के लिए अतातुर्क के नेतृत्व में लड़ी गई लड़ाई का समर्थक था। हालांकि अगस्त, 1922 में लखनऊ जिला कारागार में बंद, नेहरू ने अपनी आत्मकथा में यूनानियों के खिलाफ लड़ाई में अतातुर्क की जीत का जश्न मनाया। तुर्की को उपमहाद्वीप से मिले योगदान ने इस्बांकासी स्थापित करने में तुर्की की मदद की। अतातुर्क को भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं ने न केवल तुर्की के मुक्ति संग्राम का नेतृत्व करने के लिए सराहा, बल्कि जैसा कि गुरुदेव टैगोर ने कहा, "एक पुनरुत्थानवादी एशिया को स्थापित करने के लिए. हमारे लिए यह एक उदाहरण.....है"

तुर्की ने 15 अगस्त 1947 को भारत की स्वतंत्रता के तुरंत बाद भारत को मान्यता दी और राजनयिक संबंध स्थापित किए। वर्ष 1948 में राजदूतों का आदान-प्रदान हुआ। परस्पर ऐतिहासिक जुड़ाव, साझा सांस्कृतिक संबंध और गर्मजोशी एवं सद्भावना ने द्विपक्षीय संबंधों के विकास के लिए एक ठोस आधार प्रदान किया। हालांकि, जैसा कि घटनाएँ घटित हुईं थीं, तब तक तुर्की सोवियत विस्तारवाद के शिकार थे। स्टालिन ने पूर्वी तुर्की में क्षेत्रीय दावे किए थे और तुर्की जलडमरूमध्य में अधिकारों की मांग की थी, जिसके कारण तुर्किए ने खुद को पश्चिमी गुट के साथ जोड़ लिया था। दूसरी ओर, नेहरू के अधीन भारत ने 'गुटनिरपेक्ष' नीति की वकालत की। दृष्टिकोणों का यह टकराव और रणनीतिक हितों के अभिसरण की कमी बांडुंग सम्मेलन (1955) में ही स्पष्ट हो गया था। बांडुंग में तुर्की के प्रतिनिधि, उप प्रधानमंत्री फतिन रुस्तू ज़ोरलू ने तर्क दिया कि साम्यवादी विस्तारवाद उपनिवेशवाद के समान था। तुर्की,

पाकिस्तान, इराक, ईरान, लेबनान, लीबिया, लाइबेरिया, सूडान और फिलीपींस ने "बल, घुसपैठ और तोड़फोड़ के तरीकों का सहारा लेने वाले अंतर्राष्ट्रीय सिद्धांतों सहित सभी प्रकार के उपनिवेशवाद" की निंदा करते हुए एक प्रस्ताव प्रायोजित किया। पाकिस्तान के प्रधानमंत्री, मोहम्मद अली ने अन्य बातों के अलावा आत्मरक्षा के लिए गठजोड़ बनाने के अधिकार की वकालत की, जिसे ज़ोरलू ने यह कहते हुए समर्थन किया कि बांडुंग में तुर्की का प्रतिनिधित्व नहीं किया गया होता अगर यह नाटो के लिए नहीं होता। तुर्की के बारे में नेहरु (और साथ ही एनएएम के अन्य प्रमुख नेतृत्वकर्ताओं) का सामने आया आकलन शीत युद्ध की राजनीति से रंगा हुआ था और भारत के हितों के मुद्दों पर तुर्की की स्थिति भी उसी के अनुसार आकार लेती दिख रही थी। गोवा की मुक्ति पर तुर्की का रुख (1961) एक अच्छा उदाहरण था। अन्यथा कोई कारण नहीं था कि तुर्की ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत के खिलाफ प्रस्ताव के मसौदे को सह-प्रायोजित किया था जिसे सोवियत वीटो ने विफल कर दिया था।

इस बीच, वर्ष 1952 में नाटो में शामिल होने के बाद, तुर्की और पाकिस्तान ने फरवरी, 1954 में आपसी सहयोग के एक समझौते पर हस्ताक्षर किए और अगले वर्ष, तुर्की, इराक, ईरान, पाकिस्तान और यूनाइटेड किंगडम ने बगदाद संधि का को साकार रूप दिया। तुर्की-पाकिस्तान गठजोड़ तुर्की की भारत नीति में एक और निर्धारक कारक बन गया। इस प्रकार, जब वर्ष 1962 में भारत-चीन युद्ध हुआ, तो तुर्की ने पाकिस्तान की संवेदनशीलता के आलोक में मात्र पीछे हटने के लिए भारत को भौतिक सहायता भेजने की पेशकश की। साइप्रस का मुद्दा विवाद का एक और कारण बन गया। काहिरा (1964) में दूसरे गुट निरपेक्ष आंदोलन शिखर सम्मेलन द्वारा जारी किए गए दस्तावेज़ में साइप्रस के संदर्भ को शामिल किया गया था, जिस पर तुर्की को संदेह था कि वह भारत द्वारा किया गया था। दूसरी ओर, पाकिस्तान ने तुर्की को समर्थन दिया; बदले में तुर्किए कश्मीर पर पाकिस्तान की स्थिति का समर्थन करने लगा। वर्ष 1965 में भारत-पाक युद्ध के दौरान तुर्की ने न केवल पाकिस्तान के लिए प्रचार किया बल्कि सैन्य सहायता भेजकर पाकिस्तान की मदद भी की। वर्ष 1969 में तुर्की ने भारत को रबात में इस्लामी सम्मेलन से बाहर रखकर पाकिस्तान को समायोजित किया। और, फिर से पाकिस्तान के साथ एकजुटता का प्रदर्शन करते हुए, तुर्की ने वर्ष 1974 तक बांग्लादेश की मान्यता को रोक दिया।

फिर भी, वर्ष 1970 और वर्ष 1980 के दशक के दौरान भारत के साथ संबंध सुधारने के प्रयास किए गए। वर्ष 1987 तक भारत की ओर से प्रधानमंत्री नेहरू (वर्ष 1960) और उपराष्ट्रपति डॉ. जाकिर हुसैन (वर्ष 1965) द्वारा-तुर्की की दो उच्च स्तरीय यात्राओं-के फलस्वरूप शीर्ष स्तर के दौरे भारत और तुर्की के बीच पारस्परिक संबंधों में एक अधिक नियमित विशेषता बन गए। वर्ष 1986 में प्रधानमंत्री टर्गुट ओज़ल की भारत यात्रा और वर्ष 1988 में प्रधानमंत्री राजीव गांधी की तुर्की यात्रा ने द्विपक्षीय संबंधों में सफलता की उम्मीदें जगाईं। हालांकि तुर्की ने कश्मीर पर पाकिस्तान को समर्थन देना जारी रखा, लेकिन इससे भारत और तुर्की के बीच उच्च स्तरीय जुड़ाव में कोई बाधा नहीं आई: राष्ट्रपति शंकर दयाल शर्मा और

राष्ट्रपति के.आर. नारायणन ने क्रमशः वर्ष 1993 और वर्ष 1998 में तुर्की का दौरा किया; राष्ट्रपति इवरेन और राष्ट्रपति डेमिरेल ने क्रमशः वर्ष 1989 और वर्ष 1995 में भारत का दौरा किया। वर्ष 2000 में प्रधानमंत्री बुलेंट एसेविट की भारत यात्रा का विशेष महत्व था। इंडोफाइल के रूप में जाने जाने वाले एसेविट ने पाकिस्तान में एक पड़ाव के साथ भारत की अपनी यात्रा को जोड़ने के लिए सहमत न होकर एक साहसिक दृष्टिकोण अपनाया। एसेविट (जिन्होंने पाकिस्तान में वर्ष 1999 के तख्तापलट के बाद जनरल मुशर्रफ के तुर्की की यात्रा के दौरान उनसे मिलने से इनकार कर दिया था।) ने भारत और तुर्की के बीच लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता के साझा मूल्यों का उल्लेख किया, द्विपक्षीय व्यापार को बढ़ावा देने पर जोर दिया और भारत की आतंकवाद संबंधी चिंताओं की समझ की अभिव्यक्ति की। अधिक महत्वपूर्ण रूप से, एसेविट ने 'भारत और पाकिस्तान के बीच द्विपक्षीय वार्ताओं की आवश्यकता' का उल्लेख किया। एक प्रकार की

> तुर्की-पाकिस्तान गठजोड़ तुर्की की भारत नीति में एक और निर्णायक कारक बन गया।

> प्रधानमंत्री वाजपेयी द्वारा वर्ष 2003 में की गई तुर्की यात्रा ने द्विपक्षीय संबंधों को और गहरा करने के भारतीय पक्ष के इरादे को व्यक्त किया।

सतर्क आशावादी दृष्टिकोण विकसित हो गया था कि तुर्की भारत के साथ द्विपक्षीय संबंधों को अपनी खूबियों के आधार पर देख रहा था न कि पाकिस्तान-केंद्रित चश्मे से। वर्ष 2003 में प्रधानमंत्री वाजपेयी की तुर्की यात्रा ने द्विपक्षीय संबंधों को गहरा करने के भारतीय पक्ष के इरादे को व्यक्त किया। दिलचस्प बात यह है कि प्रधानमंत्री वाजपेयी की यात्रा के दौरान एक मीडिया ब्रीफिंग में, विदेश मंत्रालय के सचिव आर.एम. अभ्यंकर को यह कहते हुए उद्धृत किया गया था कि, "तुर्की पक्ष द्वारा पाकिस्तान के साथ हमारे संबंध या कश्मीर मुद्दे का उल्लेख नहीं किया गया, जो कि अन्य पूर्ववर्ती अवसरों से अलग है।" प्रधानमंत्री एर्दोगन और राष्ट्रपति अब्दुल्ला गुल ने क्रमशः वर्ष 2008 और वर्ष 2010 में भारत का दौरा किया।

उच्च स्तरीय बैठकों और उम्मीदों के बावजूद कि इससे बेहतर समझ पैदा होगी और द्विपक्षीय संबंधों के लिए अधिक अनुकूल माहौल तैयार होगा, पाकिस्तान कारक पूरी तरह से समीकरण से बाहर नहीं हुआ था। अफगानिस्तान पर तुर्की द्वारा जनवरी 2010 में प्रायोजित बैठक से भारत को जानबूझकर बाहर रखा गया था। अगले वर्ष, प्रधानमंत्री एर्दोगन ने संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपने संबोधन में कश्मीर का

जिक्र करते हुए कहा: " अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं को हल करना हम सभी की राजनीतिक और नैतिक जिम्मेदारी है, इससे पहले कि वे गतिरोध अपना स्वरूप विकराल कर ले। उस संबंध में, कश्मीर संघर्ष और कई जड़ पकड़े हुए अन्य विवादों को शांतिपूर्ण ढंग से हल करने के लिए और अधिक प्रभावी प्रयास किए जाने चाहिए, जिनका मैं यहां उल्लेख नहीं करूंगा।" यह थाह लगाना मुश्किल है कि जब द्विपक्षीय संबंध गति प्राप्त कर रहे थे तब तुर्की ने फिर से कश्मीर का मुद्दा क्यों उठाया। क्या यह अरब विद्रोह की पृष्ठभूमि के खिलाफ था, जिसे तुर्की ने 'अंकारा चरण' की शुरुआत माना था, एर्दोगन ने इसे कश्मीर जैसे मुद्दों को उठाते हुए इस्लामी दुनिया में अपनी साख को चमकाने का एक उपयुक्त क्षण माना, जो उनकी पार्टी के रूढ़िवादी आधार के साथ अपील करता था? इस अनुचित संदर्भ ने उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी (वर्ष 2011) और राष्ट्रपति मुखर्जी (वर्ष 2013) द्वारा की गई तुर्की की यात्राओं तक अबतक प्राप्त हुई उपलब्धियों को पूरी तरह मिट्टी पलीद कर दिया था। भारत के हितों, जैसे कि परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह की सदस्यता आदि के मुद्दों को तुर्की द्वारा दृढ़ता से कश्मीर के साथ युग्मित किए जाने से उत्पन्न परिस्थिति से यह संदेश मिला कि तुर्की भारत के साथ संबंधों को स्वतंत्र रूप से और अपनी योग्यता के आधार पर नहीं देख रहा था बल्कि इसे पाकिस्तान के साथ अपने संबंधों से जोड़ रहा था। इसलिए, जब तुर्की के साथ द्विपक्षीय वार्ता जारी थी और प्रधानमंत्री मोदी और राष्ट्रपति एर्दोगन ने एंटाल्या (नवंबर 2015) में जी20 शिखर सम्मेलन के हाशिये पर बातचीत की थी और इससे पहले विदेश कार्यालय परामर्श आयोजित किया गया था, तब द्विपक्षीय संबंधों में आगे का विकास और विस्तार ठप हो गया था।

यह थाह लगाना मुश्किल है कि तुर्की कश्मीर के खिलाफ क्यों है वह भी तब जब द्विपक्षीय संबंध गति प्राप्त कर रहे थे।

भारत के हितों, जैसे कि परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह की सदस्यता आदि के मुद्दों को तुर्की द्वारा दृढ़ता से कश्मीर के साथ युग्मित किए जाने से उत्पन्न परिस्थिति से यह संदेश मिला कि तुर्की भारत के साथ संबंधों को स्वतंत्र रूप से और अपनी योग्यता के आधार पर नहीं देख रहा था बल्कि इसे पाकिस्तान के साथ अपने संबंधों से जोड़ रहा था।

वर्ष 2016 के उत्तरार्ध के दौरान तुर्की कहाँ खड़ा था, यह तब स्पष्ट हो गया जब कश्मीर घाटी ने हिज़्ब-उल-मुजाहिदीन के स्थानीय कमांडर बुरहान वानी की हत्या के बाद पाकिस्तान द्वारा भड़काए गए हिंसक विरोध प्रदर्शनों को देखा। तुर्की के विदेश मंत्री मेवलुत कावुसोग्लु ने अगस्त, 2016 की शुरुआत में

पाकिस्तान की यात्रा पर इस्लामाबाद में एक संवाददाता सम्मेलन में टिप्पणी की कि तुर्की ने कश्मीर मुद्दे पर पाकिस्तान के रुख का पूरी तरह से समर्थन किया। ओ.आई.सी. संपर्क समूह को लामबंद करने और स्थिति की निगरानी के लिए एक तथ्य-खोजी मिशन की कश्मीर यात्रा के लिए कहते हुए, कावुसोग्लू ने कहा कि कश्मीर मुद्दे को बातचीत के माध्यम से हल किया जाना चाहिए न कि हिंसा के माध्यम से। लगभग एक महीने बाद, तुर्की के विदेश मंत्रालय ने उरी में हुए आतंकवादी हमले पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा कि, "इस जघन्य हमले के लिए, हम भारत सरकार और लोगों के दुख को साझा करते हैं, शहीद हुए सैनिकों के परिवारों के प्रति अपनी संवेदना व्यक्त करते हैं और घायलों के शीघ्र स्वस्थ होने की कामना करते हैं।" इस प्रेस विज्ञप्ति में आतंकवादी हमले की निंदा नहीं की गई और एक संतुलित बयान देते हुए कहा गया कि तुर्किए "जम्मू और कश्मीर में हाल ही में हुए बढ़ते तनाव और हताहतों के बारे में गहराई से चिंतित है और आशा करता है कि परस्पर संवाद और प्रासंगिक संयुक्त राष्ट्र प्रस्तावों के ढांचे के भीतर समस्या का समाधान किया जाएगा।" (फरवरी 2019 में पुलवामा हमले के बाद तुर्की के विदेश कार्यालय ने इसी तरह की प्रेस विज्ञप्ति जारी की थी।) राष्ट्रपति एर्दोगन ने नवंबर 2016 में पाकिस्तान की यात्रा पर प्रधानमंत्री नवाज शरीफ के साथ संयुक्त प्रेस कॉन्फ्रेंस में कहा: "हमने कश्मीर के बारे में विशेष रूप से नवीनतम घटनाक्रम पर चर्चा की। कश्मीर में हमारे भाई-बहनों को हो रही परेशानी और नियंत्रण रेखा पर बढ़ता तनाव इस हद तक पहुंच गया है कि इसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। हम नियंत्रण रेखा पर चिंता के साथ तनाव और जनहानि को देख रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र के प्रासंगिक प्रस्तावों के ढांचे के भीतर और कश्मीर में लोगों की मांगों को ध्यान में रखते हुए कश्मीर समस्या को पाकिस्तान और भारत के बीच बातचीत के माध्यम से हल किया जाना चाहिए। हम इस्लामिक सहयोग संगठन के अध्यक्ष के रूप में तुर्की के अपने कार्यकाल के दौरान, अपना समर्थन प्रदान करना जारी रखेंगे।" पाकिस्तान की नेशनल असेंबली और सीनेट के संयुक्त सत्र में तुर्की के राष्ट्रपति के संबोधन में भी इसी तरह का संदर्भ आया। कश्मीर के संदर्भ में पाकिस्तान के समर्थन में तुर्किए की अभिव्यक्ति उसकी परंपरागत स्थिति को ही स्पष्ट रूप से दोहराया। यह संभव है कि तुर्की- और एर्दोगन ने व्यक्तिगत रूप से-इस बात के लिए अनुगृहीत महसूस किया होगा कि पाकिस्तान ने तुर्की के अनुरोध पर अपने यहाँ गुलेन से जुड़े पाक-तुर्क स्कूलों को बंद कर दिया था (जो अगस्त 2016 में कावुसोग्लू की इस्लामाबाद यात्रा का मुख्य उद्देश्य था) और इन स्कूलों में तुर्की के कर्मचारियों को निष्कासित कर दिया। वर्ष 2017 में राष्ट्रपति एर्दोगन की भारत यात्रा, जिसके लिए तुर्की पक्ष असामान्य रूप से उत्सुक था, भारतीय पक्ष की आहत भावनाओं को शांत करने में विफल रहा। अपनी यात्रा की पूर्व संध्या पर वियोन टीवी को दिए एक साक्षात्कार में, एर्दोगन ने कहा कि कश्मीर मुद्दे को बहुपक्षीय बातचीत के माध्यम से हल किया जाना चाहिए और संकेत दिया कि तुर्की इस प्रक्रिया में मध्यस्थ भूमिका निभाने के लिए तैयार है। तुर्की के राष्ट्रपति कुर्द मुद्दे और जम्मू-कश्मीर के बीच किसी भी तरह की तुलना को खारिज कर रहे थे, उन्होंने कहा कि तुर्की को कुर्द लोगों के साथ नहीं बल्कि एक आतंकवादी संगठन के

साथ समस्या है जबकि जम्मू-कश्मीर क्षेत्रीय विवाद है। एर्दोगन ने यह भी स्पष्ट किया कि तुर्की एन.एस.जी. सदस्य बनने के लिए भारत के प्रयासों का समर्थन कर रहा है क्योंकि उसने एक निष्पक्ष तंत्र और मानदंड के आधार पर एन.एस.जी. में शामिल होने के लिए पाकिस्तान के मामले पर विचार का समर्थन किया है जो गैर-हस्ताक्षरकर्ताओं को एनएसजी का सदस्य बनने के लिए एन.पी.टी. पर हस्ताक्षर करने की अनुमति देगा।

हालाँकि पीएम मोदी और राष्ट्रपति एर्दोगन फिर से ओसाका (जून 2019) में जी20 की बैठक के हाशिये पर मिले, तुर्की एक पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण पर कायम रहा जो पाकिस्तान के प्रति तुर्की के रुख और हितों को दर्शाता है। तुर्की के विदेश मंत्रालय ने एक प्रेस विज्ञप्ति में चिंता व्यक्त की कि 5 अगस्त 2019 को भारत के संविधान के अनुच्छेद 370 को रद्द करने से 'मौजूदा तनाव और बढ़ सकता है' और 'बातचीत के माध्यम से और प्रासंगिक संयुक्त राष्ट्र के प्रस्तावों के ढांचे के भीतर जम्मू-कश्मीर के साथ-साथ पाकिस्तान और भारत के सभी लोगों के वैध हितों को ध्यान में रखते हुए समस्या के समाधान' की बात की। क्षेत्र में तनाव कम करने के लिए तुर्की ने भी संबंधित पक्षों की सहमति के अधीन अपने सहयोग की पेशकश की। सितंबर 2019 में यू.एन.जी.ए. सत्र में बोलते हुए, राष्ट्रपति एर्दोगन ने कहा: "सुरक्षा परिषद द्वारा अपनाए गए प्रस्तावों के बावजूद, कश्मीर घिरा हुआ है और 80 लाख लोग अभी भी कश्मीर में फंसे हुए हैं; वे कहीं नहीं जा सकते। कश्मीरी लोगों को अपने पाकिस्तानी और भारतीय पड़ोसियों के साथ एक सुरक्षित भविष्य की ओर देखने के लिए, संघर्ष के बजाय बातचीत और न्याय एवं समानता के आधार पर समस्या का समाधान करना अनिवार्य है।" यह भी जाहिर हो गया था कि भारतीय संसद द्वारा अनुच्छेद 370 को रद्द करने और इस मुद्दे का अंतर्राष्ट्रीयकरण करने के फैसले के खिलाफ समर्थन जुटाने के लिए तुर्किए ने मलेशिया (और पाकिस्तान) के साथ मिलकर काम किया था। विदेश मंत्रालय (एम.ई.ए.) के प्रवक्ता ने अपने तीखे खंडन में तुर्की पक्ष से इस मुद्दे पर कोई और बयान देने से पहले "जमीनी स्थिति की उचित समझ" प्राप्त करने का आग्रह किया। यह पूरी तरह से भारत का आंतरिक मामला है।" हालाँकि, तुर्की के राष्ट्रपति ने वर्ष 2020 और वर्ष 2021 दोनों में यू.एन.जी.ए. में अपने संबोधन में फिर से कश्मीर के मामले को उठाया। फरवरी 2020 में पाकिस्तान की सीनेट और नेशनल असेंबली की संयुक्त बैठक में अपने संबोधन में, राष्ट्रपति एर्दोगन ने कई बार कश्मीर का उल्लेख किया और कश्मीर के संबंध में पाकिस्तान का समर्थन किए जाने की तुर्की की प्रतिबद्धता को दोहराया और वर्ष 1915 के कनक्कले (गैलीपोली) और कश्मीर ("यह कल कनक्कले था और आज यह कश्मीर है, उनमें कोई अंतर नहीं है") के बीच एक समानांतर खींचा। उन्होंने एफ.ए.टी.ए में तुर्की के समर्थन का भी आश्वासन दिया, यह दावा करते हुए कि पाकिस्तान ग्रे सूची से बाहर निकलने के प्रयास में राजनीतिक दबाव का सामना कर रहा है। विदेश मंत्रालय ने फिर से एर्दोगन की टिप्पणियों पर तीखी

तुर्की के उकसावों के बावजूद, भारत और तुर्की के बीच राजनीतिक स्तर पर और संस्थागत द्विपक्षीय तंत्रों के माध्यम से संवाद बनाए रखा गया है।

प्रतिक्रिया व्यक्त की, प्रवक्ता ने रेखांकित किया कि 'टिप्पणियां न तो इतिहास की समझ को दर्शाती हैं और न ही कूटनीतिक आचरण की ..... अतीत की घटनाओं के प्रति वर्तमान के संकीर्ण दृष्टिकोण को आगे बढ़ावा देने के लिए विकृत करती हैं' और अन्य देशों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने वाले तुर्किए के पैटर्न के 'एक और' उदाहरण का प्रतिनिधित्व करती है। प्रवक्ता ने स्पष्ट रूप से 'तुर्की द्वारा सीमा पार आतंकवाद को न्यायोचित ठहराने के बार-बार के प्रयासों को बिंदु-वार खारिज कर दिया, जो पाकिस्तान द्वारा खुले तौर पर निर्लज्जता के साथ व्यवहार रूप में किया जा रहा है'। तुर्की के राजदूत को दृढ़ता के साथ आपत्ती जताया गया था और इस बात पर जोर दिया गया था कि इन घटनाक्रमों का द्विपक्षीय संबंधों पर गहरा प्रभाव पड़ा है।

संयुक्त राष्ट्र (संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद सहित), द्विपक्षीय तुर्की-पाकिस्तान तुर्की मंचों और तुर्की-पाकिस्तान-अज़रबैजान त्रिपक्षीय तंत्र के अलावा, तुर्की कश्मीर मुद्दे को उठाने और ओआईसी में नियमित रूप से भारत की आलोचना करने में मुखर रहा है। (तुर्की वर्ष 1994 से कश्मीर पर ओआईसी संपर्क समूह का सदस्य है)। तुर्की के उकसावों के बावजूद, भारत और तुर्की के बीच राजनीतिक स्तर पर और संस्थागत द्विपक्षीय तंत्र दोनों के माध्यम से संवाद बनाए रखा गया है। व्यापारिक संबंध, जो द्विपक्षीय संबंधों का एक अन्य महत्वपूर्ण आधार है, में भी काफी प्रभावशाली वृद्धि देखी गई है। व्यापारिक लेन-देन, जो वर्ष 2011-12 में 4.6 बिलियन अमेरिकी डॉलर था, वर्ष 2021-22 में बढ़ कर 10 बिलियन अमेरिकी डॉलर (जिसका लक्ष्य वर्ष 2017 में राष्ट्रपति एर्दोगन की भारत यात्रा के दौरान निर्धारित किया गया था) को पार कर गया। यद्यपि तुर्की में बड़ी संख्या में भारतीय कंपनियां पंजीकृत हैं, द्विपक्षीय निवेश वास्तविक रूप से मामूली है (तुर्की के आंकड़ों के अनुसार, तुर्की में भारतीय निवेश लगभग 125 मिलियन अमरीकी डालर और भारत में तुर्की निवेश 223 मिलियन अमरीकी डालर होने का अनुमान है), तुर्की के ठेकेदारों की भारत में लगभग 430 मिलियन अमरीकी डालर की परियोजनाएं हैं और यह तुर्की के व्यापारिक हितों के लिए रुचि का क्षेत्र है। तुर्की भारतीय पर्यटकों के लिए एक लोकप्रिय गंतव्य बन गया है (वर्ष 2019 में लगभग 230,000 भारतीय पर्यटकों ने तुर्की की यात्रा की) और यह भारत से पश्चिम की ओर उड़ानों से युग्मित हो कर तुर्की एयरलाइंस को भारत में गंतव्यों और आवृत्ति दोनों के संदर्भ में भारत और तुर्की के बीच उड़ान संचालन का विस्तार करने की अनुमति देने के भारत से लगातार अनुरोध के पीछे का कारण बन गया है।

हालाँकि, ऐसे अचूक संकेत हैं कि तुर्की द्वारा बार-बार कश्मीर का उल्लेख करने और भारत के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने के कारण और विशेष रूप से तुर्की द्वारा धारा 370 को रद्द करने पर सवाल उठाने और आलोचना करने के बाद तुर्की के साथ संबंधों को ले कर भारत का धैर्य कमजोर पड़ने लगा है।

हालाँकि, ऐसे अचूक संकेत हैं कि तुर्की द्वारा बार-बार कश्मीर का उल्लेख करनेर्भ और भारत के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने और विशेष रूप से तुर्की द्वारा अनुच्छेद 370 को रद्द करने पर सवाल उठाने और आलोचना करने के बाद तुर्किए के साथ संबंधों को ले कर भारत का धैर्य कमजोर पड़ने लगा है। भारत ने हिंदुस्तान शिपयार्ड लिमिटेड और अनादोलु शिपयार्ड के नेतृत्व में तुर्की शिपयार्ड के एक संघ के बीच 2 बिलियन अमेरिकी डॉलर के पाँच 45000 टन बेड़े समर्थन पोतों के हुए सौदों पर कुछ समय के लिए रोक लगा दिया है और संकेत दिया है कि आर्थिक प्रकृति का अन्य जवाबी कार्रवाई का विकल्प का भी अनुसरण कर सकता है। प्रधानमंत्री मोदी ने वर्ष 2019 में यू.एन.जी.ए. के हाशिये पर साइप्रस के राष्ट्रपति और ग्रीस के प्रधानमंत्री से मुलाकात की, जिसका आयात तुर्की की ओर से नहीं खोया जा सकता था। भारत ने वर्ष 2019 में सीरिया में ऑपरेशन पीस स्प्रिंग के खिलाफ एक प्रेस विज्ञप्ति जारी की। लीबिया के संदर्भ में जून 2020 में जारी प्रेस बयान जिसमें काहिरा घोषणा (6 जून 2020) का समर्थन किया गया था और दूसरा जुलाई 2022 में इराक के कुर्दिस्तान क्षेत्र में जाखो प्रशासन में हत्याओं की निंदा की गई, जो तुर्की से जुड़ी संघर्ष की स्थितियों में भारत की स्थिति का संकेत था। और, आर्मेनिया-अज़रबैजान संघर्ष के मामले में, आर्मेनिया को भारतीय समर्थन के परिणामस्वरूप रक्षा निर्यात किया किया गया।

प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा कि, "तुर्की मध्य यूरोप, मध्य एशिया और पश्चिम एशिया के जंक्शन पर स्थित है। हम पश्चिम एशिया, मध्य एशिया और पूर्वी एशिया के बीच स्थित हैं। हमारा भू-राजनीतिक स्थान क्षेत्र में हमें साझा चिंताएँ देते हैं, साथ ही साथ कुछ सामान्य अवसर भी प्रदान करते हैं। हालाँकि, एक नई साझेदारी बनाने हेतु एक साथ आने के लिए भारत और तुर्की के बीच सहयोग की संभावना काफी हद तक अधूरी है, क्योंकि भारत के लिए महत्वपूर्ण मुद्दों पर तुर्की का दृष्टिकोण अविश्वसनीय है। वास्तव में, बड़े पैमाने पर भारतीय जनता की राय में तुर्किए को नकारात्मक रूप में देखने लगी है, पहली बात तो यह कि तुर्की पाकिस्तान का एक अंधसमर्थक देश है और इसके परिणामस्वरूप, यह भारत के हितों के खिलाफ और भारत के प्रति अमित्र तरीके से कार्य करने में प्रवृत्त है। बहुत संक्षिप्त अवधि को छोड़कर जब प्रधानमंत्री एसेविट ने वर्ष 2000 में भारत का दौरा किया था, जैसा कि सी. राजा मोहन ने लिखा है, "तुर्की प्रतिष्ठान द्वारा पाकिस्तान का अनियंत्रित आलिंगन

अपरिवर्तित रहा है, चाहे अंकारा पर-धर्मनिरपेक्ष सेना या वर्तमान इस्लामी नेतृत्व हावी हो।" वर्ष 1950 और वर्ष 1960 के दशक के दौरान यदि भारतीय उपमहाद्वीप के प्रति तुर्की का दृष्टिकोण और भारत और पाकिस्तान के साथ उसके संबंध मुख्य रूप से शीत युद्ध की राजनीति से अनुकूलित था, तो पिछले दशक के दौरान उसकी नीति एक इस्लामवादी एजेंडे की छाप रखती है। प्रधानमंत्री एर्दोगन के अधीन ए.के. पार्टी की सरकार, भले ही

> बड़े पैमाने पर भारतीय जनता की राय में तुर्किए को नकारात्मक रूप में देखने लगी है, पहली बात तो यह कि तुर्की पाकिस्तान का एक अंधसमर्थक देश है और इसके परिणामस्वरूप, यह भारत के हितों के खिलाफ और भारत के प्रति अमित्र तरीके से कार्य करने में प्रवृत्त है।

भारत और पाकिस्तान को डी-हाइफ़नेट नहीं कर रही है, उन्होंने भारत-पाक मुद्दों पर अपेक्षाकृत तटस्थ स्थिति के साथ शुरुआत की, लेकिन फिर न केवल पाकिस्तान के लिए समर्थन बल्कि बहुपक्षीय मंचों में पाकिस्तान के हितों की वकालत करने की ओर भी रुख कर लिया है। यह उस चरण के साथ मेल खाता है जब एर्दोगन ने इस्लामी कारणों का समर्थन करके और राजनीतिक इस्लाम का प्रतिनिधित्व करने वाली ताकतों का समर्थन करके अपनी खुद की-और तुर्की के लिए-इस्लामी दुनिया में सक्रिय रूप से जगह बनाने का प्रयास किया। तुर्की नेतृत्व अपने आस-पास और अन्य जगहों पर कठिन परिस्थितियों में चला गया। यदि यह भारत के मामले में जम्मू-कश्मीर था, तो बांग्लादेश में यह युद्ध अपराध न्यायाधिकरण था।

'एर्दोगन सिद्धांत' की परिभाषा एक अधिक मुखर, आक्रामक और दखल देने वाली विदेश नीति के रूप में किया गया है जिसे बड़े पैमाने पर इस्लामी दुनिया-और अपने पड़ोसियों व घरेलू लोगों को भी- प्रदर्शित करने के लिए डिज़ाइन किया गया है कि एर्दोगन एक ऐसे नेता हैं जो इस्लामिक दुनिया से संबंधित मुद्दों पर अपने मन की बात खुल कर कहते हैं। तुर्की का सरकार समर्थक दैनिक, डेली सबा (18 फरवरी 2020) ने फरवरी 2020 में राष्ट्रपति एर्दोगन की पाकिस्तान यात्रा के अपने कवरेज में टिप्पणी की, 'एर्दोगन एक असाधारण नेता हैं ... वे महत्वपूर्ण मुद्दों को बेहतर तरीके से समझते हैं ... वे आज दुनिया में प्रचलित अन्यायपूर्ण व्यवस्था की आलोचना करते हैं ... वे दुनिया भर में उत्पीड़ित लोगों और मुसलमानों के लिए बोलते हैं-ऐसे लोग चाहे म्यांमार, कश्मीर, सीरिया, फिलिस्तीन या सोमालिया में हों।' अपनी बीस करोड़ से अधिक मुस्लिम आबादी (मुख्य रूप से सुन्नी) वाला देश पाकिस्तान, इस्लामिक ब्लॉक के नेतृत्व के लिए एर्दोगन की प्रतिस्पर्धा कर के अपना महत्व हासिल किया। हालांकि यह अकेला तुर्की द्वारा पाकिस्तान का 'अनक्रिटिकल आलिंगन' को पूरी तरह से स्पष्ट नहीं करता है। इसका एक अन्य कारक भारतीय उपमहाद्वीप के इतिहास और विकास विशेष रूप से भारत का विभाजन और जम्मू-

कश्मीर का भारत में विलय के इतिहास की तुर्किए की त्रुटिपूर्ण समझ भी है। प्रोफेसर अश्विनी के. महापात्रा ने अपने लेख 'ब्रिज टू एनाटोलिया: एन ओवरव्यू ऑफ इंडो-टर्किश रिलेशंस (द टर्किश ईयरबुक ऑफ इंटरनेशनल) [वॉल्यूम। XXXIX] 2008), तुर्किए गाथा में उल्लेख किया है। पाकिस्तान को कभी-कभी एक ऐसे राज्य के रूप में भी चित्रित किया गया है जो 'मूल रूप से तुर्की है क्योंकि मध्यकालीन भारत में ग़ज़ना के सुल्तान महमूद ने एक शक्तिशाली तुर्की राज्य की स्थापना की थी और वही पाकिस्तान का बीज लेकर आया था। एर्दोगन ने फरवरी 2020 में तुर्की और पाकिस्तान के बीच एक साझा इतिहास को रेखांकित करने के लिए पाकिस्तान की संसद को अपने संबोधन में इस विषय का आह्वान किया था।

भारतीय दृष्टिकोण से यह भी समस्याजनक तथ्य है कि आतंकवाद पर एक समान नीति का दावा करने के बावजूद तुर्की ने भारत में पाकिस्तान से निकलने वाले सीमा पार राज्य-प्रायोजित आतंकवाद के लिए (इराक और सीरिया में ठिकानों से कथित कुर्द आतंकवादी गतिविधियों के बारे में अपनी संवेदनशीलता के विपरीत) आंखें मूंद लीं हैं।

यह वास्तव में एक स्वागत योग्य घटनाक्रम होगा यदि प्रधानमंत्री मोदी की उज्बेकिस्तान में राष्ट्रपति एर्दोगन के साथ वार्ता से अंकारा कश्मीर पर अपने दृष्टिकोण और सामान्य तौर पर भारत-पाकिस्तान संबंधों से जुड़े मुद्दों पर गंभीरता से पुनर्विचार करती है।

इसके अलावा, जैसा कि महापात्र ने कहा, 'एक गलत धारणा यह भी है कि तुर्की के स्वतंत्रता संग्राम के दौरान ... केवल भारतीय मुसलमानों ने ही खिलाफत के लिए नैतिक समर्थन दिया था। गांधी के नेतृत्व वाली राष्ट्रवादी ताकतों द्वारा दिए गए समर्थन को नजरअंदाज किया गया या कम करके आंका गया। भ्रांतिपूर्ण द्वि-राष्ट्रवादी सिद्धांत में निर्विवाद विश्वास भी पाकिस्तान के साथ तुर्की के संबंधों और कश्मीर पर उसके दृष्टिकोणों को दिशा देता है और उसे उचित ठहराता है। पाकिस्तान के लिए स्पष्ट समर्थन को समय-समय पर मध्यस्थता के प्रस्तावों के साथ जोड़ा जाता है, जिसमें भारत ने सदैव अपनी स्पष्ट नीति के अनुसार ऐसे प्रस्तावों को अस्वीकार्य मानता है और पाकिस्तान के साथ बकाया मुद्दों को द्विपक्षीय रूप से हल करने की बात करता है। भारतीय दृष्टिकोण से यह भी समस्याजनक तथ्य है कि आतंकवाद पर एक समान नीति का दावा करने के बावजूद तुर्की ने भारत में पाकिस्तान से निकलने वाले सीमा पार राज्य-प्रायोजित आतंकवाद के लिए (इराक और सीरिया में ठिकानों से कथित कुर्द आतंकवादी गतिविधियों के बारे में अपनी संवेदनशीलता के विपरीत) आंखें मूंद लीं हैं। उल्लेखनीय है कि विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता ने अपनी सार्वजनिक टिप्पणियों में इस चिंता को उजागर किया था। यहाँ दृष्टिकोण का भी एक मुद्दा है। मोटे तौर पर, तुर्की की वर्तमान विदेश नीति द्विपक्षीय संबंधों को अलग-अलग हिस्सों में

विभाजित करने की प्रवृत्ति रखती है और यह सुनिश्चित करती है कि राजनीतिक क्षेत्र में मतभेदों के कारण आर्थिक और वाणिज्यिक क्षेत्र में संबंधों को बाधित नहीं करना चाहिए। दुर्भाग्य से, तुर्की नेतृत्व भारतीय नेतृत्व और भारतीय जनमत के लिए कश्मीर की प्रमुखता को नहीं समझता है।

इसके अतिरिक्त, अन्य गंभीर अड़चनें भी हैं। तुर्की का रक्षा उद्योग काफी तेजी से विकसित हुआ है और यह तकनीकी रूप से परिष्कृत स्तर हासिल कर लिया है। तुर्की स्वाभाविक रूप से रक्षा निर्यात को बढ़ावा देने के इच्छुक हैं और पाकिस्तान, पहले से ही तुर्की हथियारों का एक आयातक है (शायद तुर्की का सबसे बड़ा रक्षा सामग्री का आयातक) और उसे एक आकर्षक बाजार प्रदान करता है। 25-26 नवंबर 2022 को तुर्की की अपनी यात्रा के दौरान पाकिस्तान नौसेना के लिए तुर्की द्वारा बनाए गए चार एम.आई.एल.जे.ई.एम. कार्वेट जहाजों में से तीसरे के संयुक्त उद्घाटन के लिए, प्रधानमंत्री शरीफ ने तुर्की को चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारे (सी.पी.ई.सी.) में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया। उन्होंने आगे कहा कि अगर तुर्की इसमें दिलचस्पी दिखाता है तो वह चीन के साथ इस पर चर्चा करेगा। पीओके की परियोजनाओं में तुर्की की भागीदारी भारत-तुर्की संबंधों पर अच्छी तरह से अधर में लटका सकती है। तुर्की से बाहर कश्मीरी अलगाववादियों की गतिविधियों के बारे में भारतीय मीडिया में भी रिपोर्टें आई हैं और अगर इनकी पुष्टि की जाती है, तो यह स्वाभाविक रूप से अस्वीकार्य होगा।

यह वास्तव में एक स्वागत योग्य घटनाक्रम होगा यदि प्रधानमंत्री मोदी की उज्बेकिस्तान में राष्ट्रपति एर्दोगन के साथ वार्ता से अंकारा कश्मीर पर अपने दृष्टिकोण और सामान्य तौर पर भारत-पाकिस्तान संबंधों से जुड़े मुद्दों पर गंभीरता से पुनर्विचार करती है। यूएनजीए सत्र में एर्दोगन के बयान में कश्मीर का अपेक्षाकृत हल्का संदर्भ ऐसे समय में आया है जब तुर्की ने इजरायल, सऊदी अरब और यूएई के साथ संबंधों को फिर से स्थापित किया है और मिस्र के साथ अपने संबंधों में सुधारने का प्रयास किया है।

> संतुलन पर, यह प्रतीक्षा करना और निगरानी करना विवेकपूर्ण होगा कि क्या तुर्की भारत की मुख्य चिंताओं को समझता हैं और उनका समाधान करता है. एवं तदनुसार द्विपक्षीय सहयोग का निर्धारण किया जाएगा।

ऐसा बाहरी कारकों और घरेलू दबाव के कारण हुआ है। वर्ष 2023 में तुर्की में राष्ट्रपति और संसदीय चुनाव होने हैं और विदेश नीति के मुद्दों पर पूर्व स्थापित नीति चुनावी मजबूरियों से प्रभावित हो सकती है। उज्बेकिस्तान में नेताओं के बीच बैठक के बारे में आधिकारिक भारतीय बयानों से यह संकेत मिलता है कि भारत किस दिशा में संबंधों को विकसित करना पसंद करेगा, और इसे गहरा करने के लिए आर्थिक और वाणिज्यिक क्षेत्र व अन्य क्षेत्रों में आशाजनक संभावनाओं की तलाश करेगा जो दोनों देशों की अर्थव्यवस्थाओं के आकार और दोनों देशों में उपलब्ध समृद्ध और विविध विशेषज्ञता को देखते हुए भी द्विपक्षीय जुड़ाव की संभावनाओं से स्वतः स्पष्ट है। मोटे तौर पर, भारत और तुर्की दोनों इस बात पर

भी सहमत हैं कि आज अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था जिस रूप में मौजूद हैं, वे वर्तमान वैश्विक वास्तविकताओं को प्रतिबिंबित नहीं करते हैं। विभिन्न अर्थव्यवस्थाएं संबंधित भौगोलिक क्षेत्रों में अपना अलग महत्वपूर्ण प्रभाव का इस्तेमाल करते हैं। क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय विकास और मुद्दों पर विभिन्न स्तरों पर विचारों का नियमित आदान-प्रदान से एक-दूसरे के दृष्टिकोण के बारे में बेहतर समझ और संभवत: उन सामान्य हितों के लिए जमीन तैयार करने में को बढ़ावा देने में मदद मिलेगी। संस्थागत तंत्र और संरचनाएं जो पारस्परिक संबंधों के दायरे को बढ़ा सकते हैं और उसे गहरा कर सकते हैं तथा द्विपक्षीय बातचीत की क्षमता का एहसास कराने में मदद कर सकते हैं, पहले से ही काफी हद तक मौजूद हैं। हालाँकि, द्विपक्षीय संबंध जो रास्ता अपनाएगा, वह बड़े पैमाने पर तुर्की के दृष्टिकोण पर निर्भर करेगा। इस संदर्भ में, जैसा कि भारतीय विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता ने कहा, जम्मू और कश्मीर के संदर्भ न तो मददगार हैं और न ही उपयोगी। तुर्की के ट्रैक रिकॉर्ड और राष्ट्रपति एर्दोगन की नेतृत्व की अस्थिर शैली को देखते हुए, किसी भी निष्कर्ष पर पहुंचना जल्दबाजी होगी। संतुलन के मसले पर, इस बात की प्रतीक्षा करना और निगरानी करना विवेकपूर्ण होगा कि क्या तुर्की भारत की मुख्य चिंताओं को समझता है और उनका समाधान करता है, एवं तदनुसार द्विपक्षीय सहयोग का निर्धारण किया जाएगा।

श्री राहुल कुलश्रेष्ठ एक सेवानिवृत्त कैरियर राजनयिक हैं। उन्होंने तुर्की और मिस्र में भारत के राजदूत के रूप में कार्य किया। उन्होंने मॉस्को, न्यूयॉर्क, थिम्पू, यांगून और इस्लामाबाद में भारतीय मिशनों में इसके साथ-साथ नई दिल्ली में विदेश मंत्रालय में भी विभिन्न पदों पर कार्य किया। राजदूत कुलश्रेष्ठ ने परमाणु ऊर्जा विभाग में संयुक्त सचिव के पद पर भी काम किया।

वैश्विक प्रतिष्ठा के लिए तुर्की का प्रयास

गठबंधनों और प्रति गठबंधनों की राजनीति

राहुल कुलश्रेष्ठ

अटलांटिकवादी विरासत

तुर्की गणराज्य की स्थापना 1923 में 'तुर्कियों के लिए तुर्की' और एक संप्रभु इकाई के रूप में की गई थी जिसने अपने ओटोमन अतीत को खारिज कर दिया था। अतातुर्क ने जोर देकर कहा कि 'नए तुर्की का पुराने तुर्की से कोई संबंध नहीं है। पुराना ओटोमन राज्य इतिहास के गर्त में चला गया है। अब, एक नए तुर्की का जन्म हुआ है'। अतातुर्क, जिन्होंने वर्ष 1938 में अपनी मृत्यु तक नए तुर्की पर एकछत्र राज्य किया, ने नई इकाई की मान्यता और समेकन पर ध्यान केंद्रित किया, एक ऐसी इकाई जो अपने अभिविन्यास में आधुनिक और पश्चिमी होनी थी। विचारधारा और व्यावहारिकता ने दृष्टिकोण को निर्देशित किया, क्योंकि जोर स्वाभाविक रूप से एक आधुनिक राज्य के निर्माण और उन उलझनों और दुस्साहस से बचने पर था जो टिके नहीं रह सकते थे। और ऐसी सतर्कता अतातुर्क की मृत्यु के बाद भी बनी रही, विभिन्न कारणों से तुर्की द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान अधिकांश समय के लिए तटस्थ रहा था, फरवरी 1945 में युद्ध के अंत में इसने मित्र राष्ट्रों के साथ अपनी ताकत झोंकी दी थी।

यद्यपि पश्चिम की ओर देखने वाला, अतातुर्क तुर्की की स्वतंत्रता संग्राम के दौरान पर्याप्त रूप से व्यावहारिक कदम उठाते हुए सोवियत समर्थन प्राप्त करने का फैसला लिया था और बाद में, वर्ष 1925 में, यूएसएसआर के साथ दस साल की 'दोस्ती और तटस्थता की संधि' की, जिसे 1935 में और दस वर्षों के लिए बढ़ा दिया गया था। तुर्की और सोवियत संघ के बीच तनाव तब बढ़ गया जब सोवियत संघ वर्ष 1945 में संधि से हट गया और तुर्की जलडमरूमध्य में अधिकारों की मांग के अलावा पूर्वी तुर्की में क्षेत्रीय दावे किए। स्टालिन के दबाव में, तुर्की ने वर्ष 1952 में खुद को नाटो और फिर वर्ष 1955 में सेंटो के साथ जोड़ लिया। इस प्रकार तुर्की ने पश्चिमी शिविर में प्रवेश किया और अपने भूस्थैतिक स्थान के आधार पर, नाटो सुरक्षा रणनीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया। हालाँकि, साइप्रस के मुद्दे पर पश्चिमी देशों की नीति और ग्रीस के साथ अपने विवादों से निराश, तुर्की ने एक हद तक संतुलन की स्थिति बनाए रखने का प्रयास किया और यहां तक कि वर्ष 1978 में सोवियत संघ के साथ एक मैत्री समझौते पर हस्ताक्षर भी किया।

टर्गुट ओज़ल-नव-तुर्कवाद का आगमन

टर्गुट ओज़ल युग (वर्ष 1983 से वर्ष 1989 तक प्रधानमंत्री और वर्ष 1989 से वर्ष 1993 तक राष्ट्रपति) ने तुर्किए की दृष्टि और दृष्टिकोण में परिवर्तन की शुरुआत की। ओजल ने कई गहन कमालवादी सिद्धांतों को चुनौती दी। अतातुर्क का मानना था कि 'तुर्क हमेशा पश्चिम की ओर जाएंगे और उसी दिशा में आगे बढ़ते रहेंगे'।

अतातुर्क, जिसने वर्ष 1938 में अपनी मृत्यु तक नए तुर्की पर एकछत्र राज्य किया, ने नई इकाई की मान्यता और समेकन पर ध्यान केंद्रित किया, एक ऐसी इकाई जो अपने अभिविन्यास में आधुनिक और पश्चिमी होनी थी।

इस प्रकार तुर्की ने पश्चिमी शिविर में प्रवेश किया और अपने भूस्थैतिक स्थान के आधार पर, नाटो सुरक्षा रणनीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया। हालाँकि, साइप्रस के मुद्दे पर पश्चिमी देशों की नीति और ग्रीस के साथ अपने विवादों से निराश, तुर्की ने एक हद तक संतुलन की स्थिति बनाए रखने का प्रयास किया और यहां तक कि वर्ष 1978 में सोवियत संघ के साथ एक मैत्री समझौते पर हस्ताक्षर भी किया।

ओज़ल की दृष्टि एक ऐसे तुर्की की थी जो पश्चिमीकरण को अपनी सांस्कृतिक और इस्लामी जड़ों के साथ जोड़ती है। जैसे ओज़ल ने कहा, 'हम एक इस्लामी देश हैं। पश्चिम से हमारे मतभेद हैं... हम पश्चिम और पूर्व के बीच सेतु हैं। हमें पश्चिम के विज्ञान, तकनीक, सोच-समझ और समझौते को अपनाने की जरूरत है। लेकिन हमारे अपने भी मूल्य हैं जो पश्चिम के पास नहीं हैं। ओज़ल ने माना कि कमालवादी विदेश नीति अत्यधिक सतर्क दृष्टिकोण रखता था और वह द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान अपनाई गई नीति के लिए महत्वपूर्ण था। उनका विचार था कि तुर्की की विदेश नीति को "तुर्की व्यापार और राजनीतिक शक्ति" बढ़ाने का एक साधन होना चाहिए। इस प्रकार, जहां एक ओर ओजल ने यूरोपीय संघ की पूर्ण सदस्यता के लिए आवेदन किया, वहीं उन्होंने अरब दुनिया और पड़ोसी देशों के साथ अधिक सक्रिय संबंध बनाने की शुरूआत की। अपने निकट पड़ोसियों में उसे तुर्की उद्योग के लिए स्वाभाविक बाजार दिखाई देता था और ओज़ल द्वारा शुरू किए गए आर्थिक सुधारों ने तुर्की को अपने पड़ोस में सक्रिय रूप से आर्थिक गतिविधियों में शामिल होने के लिए प्रेरित किया। इसी तरह के आवेगों ने आर्थिक सहयोग संगठन और काला सागर आर्थिक सहयोग जैसी पहलों को निर्देशित किया। यूएसएसआर के विघटन से बाल्कन और मध्य एशिया पर सबका ध्यान केंद्रित हुआ। तुर्की ने एड्रियाटिक से मध्य एशिया तक अपना प्रभाव बढ़ाने का सपना भी देखा था। खाड़ी युद्ध के दौरान, ओज़ल भी अमेरिकी नेतृत्व वाले गठबंधन में शामिल हो गया। इस प्रकार यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि तुर्की अपने पूर्व में राजनीतिक और सैन्य दृष्टि से सक्रिय विदेश नीति अपना कर रहा था। यह तब और भी स्पष्ट हुआ जब तुर्की ने अब्दुल्ला ओकलां को निष्कासित करने के लिए सीरिया पर सैन्य दबाव डाला।

> ओज़ल की दृष्टि एक ऐसे तुर्की की थी जो पश्चिमीकरण को अपनी सांस्कृतिक और इस्लामी जड़ों के साथ जोड़ती है।

ओज़ल ने एक नव-तुर्कवादी नीति की शुरुआत की थी। यह नीति ओज़ल के वैचारिक विश्वास से उपजी थी, क्योंकि यह इस विश्वास से पैदा हुआ था कि तुर्किए ने विकास का एक ऐसा स्तर हासिल कर लिया है जिसके आधार पर वह अब इस क्षेत्र में एक अधिक शक्तिशाली भूमिका निभाने के लिए सक्षम हो गया है।

> ओज़ल ने एक नव-तुर्कवादी नीति की शुरुआत की थी। यह नीति ओज़ल के वैचारिक विश्वास से उपजी थी, क्योंकि यह इस विश्वास से पैदा हुआ था कि तुर्किए ने विकास का एक ऐसा स्तर हासिल कर लिया है जिसके आधार पर वह अब इस क्षेत्र में एक अधिक शक्तिशाली भूमिका निभाने के लिए सक्षम हो गया है।

तुर्की का सकल घरेलू उत्पाद वर्ष 1980 में 58 बिलियन अमरीकी डालर से बढ़ कर वर्ष 1997 में 187 बिलियन अमरीकी डालर का हो गया और इसी अवधि के दौरान, निर्यात 2.9 बिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर 26.8 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गया। सैन्य खर्च में भी अभिवृद्धि हुई और तुर्की ने संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ सैन्य संबंधों को गहरा कर अपने रक्षा उद्योग का निर्माण करने की ठाना। शीत युद्ध की समाप्ति, यूएसएसआर का पतन और खाड़ी युद्ध भी ऐसे कारक थे जिन्होंने तुर्की को एक बड़ी भूमिका निभाने में सक्षम बनाया।

सामरिक गहराई

ए.के. (न्याय और विकास) पार्टी वर्ष 2002 में सत्ता में आई और तुर्की की विदेश नीति की सक्रियता और भी स्पष्ट हो गई। अहमत दावुतोग्लु (एर्दोगन के प्रमुख विदेश नीति सलाहकार, जो बाद में विदेश मंत्री और फिर प्रधानमंत्री बने) ने तुर्की की ओटोमन विरासत, इसकी भूस्थैतिक स्थिति और एकेपी के रूढ़िवादी इस्लामी अभिविन्यास को मिलाकर तुर्की की विदेश नीति की दशा एवं दिशा की एक स्पष्ट और सुसंगत रणनीतिक दृष्टि को प्रतिपादित किया। दावुतोग्लु ने माना कि अपने इतिहास और भूगोल के आधार पर, तुर्की ने "रणनीतिक गहराई" का लुत्फ लिया। तुर्की कई क्षेत्रों-मध्य एशिया, खाड़ी और मध्य-पूर्व,

काकेशस, बाल्कन, काला सागर और भूमध्य सागर से संबंधित थे। तुर्की, दावुतोग्लू ने तर्क दिया, उन देशों की श्रेणी से संबंधित था जो "केंद्रीय शक्तियां" थी। ऐसे देश जिन्हें भौगोलिक क्षेत्रों में प्रभाव डालने के लिए चुना गया था और इस प्रकार ये देश वैश्विक स्तर पर एक महत्वपूर्ण रणनीतिक भूमिका निभाते हैं। इसके लिए, तुर्की को विवादास्पद घरेलू मुद्दों, मुख्य रूप से, कुर्द समस्या को हल करने और घरेलू वैचारिक विभाजन को दूर करने की आवश्यकता थी। बाह्य रूप से, तुर्की को 'पड़ोसियों के साथ शून्य समस्या नीति' को आगे बढ़ाने की आवश्यकता थी। दावुतोग्लु ने इस आलोचना को खारिज कर दिया कि वह एक नव-ओटोमनवादी नीति का अनुसरण कर रहे थे। उसके लिए, संदर्भ यह था कि पारंपरिक भौगोलिक क्षेत्र 'सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक अर्थों में फिर से उभर रहे हैं'। यूरोपीय संघ की पूर्ण सदस्यता एक विचाराधीन मुद्दा पर बनी रही, लेकिन प्राथमिकताओं में से एक के रूप में। तुर्की ने खुद को एक निर्वाचित सरकार के साथ उदारवादी इस्लामी देश के रूप में भी प्रस्तुत किया, जिसने लोकतंत्र और मुक्त बाजार का समर्थन किया, जिसकी 9/11 के बाद की अपनी अपील थी।

दावुतोग्लु ने माना कि अपने इतिहास और भूगोल के आधार पर, तुर्की ने "रणनीतिक गहराई" का लुत्फ लिया। तुर्की कई क्षेत्रों-मध्य एशिया, खाड़ी और मध्य-पूर्व, काकेशस, बाल्कन, काला सागर और भूमध्य सागर से संबंधित थे।

एकेपी के सत्ता में रहने के दो दशकों के दरम्यान तुर्की की विदेश नीति को कई चरणों में देखा जा सकता है। लगभग वर्ष 2002 से वर्ष 2011 तक के पहले चरण में, तुर्की ने एक अधिक सहयोगी मुद्रा अपनाई। सीरिया के साथ संबंधों में इस हद तक सुधार हुआ कि बशर अल-असद ने वर्ष 2009 में तुर्की का दौरा किया। दोनों देश "अपने सहयोग का विस्तार करने और उसे मजबूती देने" के लिए एक तुर्की-सीरियाई उच्च स्तरीय रणनीतिक सहयोग परिषद स्थापित करने पर सहमत हुए। तुर्की ने फिलिस्तीनी गुटों के बीच, सीरिया और इज़राइल के बीच मतभेदों को पाटने की कोशिश की, और कुर्दिस्तान क्षेत्रीय सरकार (केआरजी, इराक और ईरान) के साथ संबंध जोड़ा। मई 2010 में तुर्की, ईरान और ब्राजील के बीच तेहरान समझौते के माध्यम से ईंधन की छड़ों के लिए ईरान के 1,200 किलोग्राम कम समृद्ध यूरेनियम की अदला-बदली करने का समझौता तुर्की की धरती पर किया गया। तुर्की ने खुद को पश्चिम और पूर्व के बीच एक सेतु की भूमिका में भी प्रस्तुत किया। सामान्य तौर पर, तुर्की को इस क्षेत्र में एक सौम्य प्रभाव का प्रयोग करते देखा गया और भले ही बाद में वर्ष 2008 में गाज़ा में इज़राइल का आक्रमण के कारण तुर्की-इजरायल संबंध तनावपूर्ण हो गए और फिर वर्ष 2010 में 'मावी मारमारा' की घटना के साथ यह और बिगड़ गया, इस क्षेत्र के भीतर तुर्की को फिलिस्तीनी कारणों का समर्थक माना जाता था। वर्ष 2002

और वर्ष 2010 के बीच, तुर्की के कुल निर्यात में मध्य पूर्व का हिस्सा 6% से बढ़कर 16% हो गया, और मध्य पूर्व के साथ कुल व्यापार की मात्रा 3.9 बिलियन अमरीकी डॉलर से बढ़कर 23.6 बिलियन अमरीकी डॉलर हो गई। इसके आर्थिक आयाम में नीति ने पहली अनातोलियन व्यापारिक हितों के उदय की पृष्ठभूमि और इसी अवधि में तुर्की की तीव्र आर्थिक वृद्धि में फिर से पर्याप्त अर्थ दिया। वर्ष 2011 में सकल घरेलू उत्पाद में तीन गुना वृद्धि हुई और निर्यात लगभग 36 बिलियन अमरीकी डॉलर से बढ़कर 135 बिलियन अमरीकी डॉलर हो गया। मध्य पूर्व के साथ अधिक से अधिक व्यापार और आर्थिक सहयोग को बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित करने के साथ-साथ तुर्की की बढ़ती आर्थिक ताकत का मतलब यह भी था कि तुर्की इस क्षेत्र में पश्चिम से अधिक स्वतंत्र एक विशिष्ट पहचान कायम करने में प्रवृत्त था। वर्ष 2003 में इराक पर अमेरिकी नेतृत्व वाले आक्रमण हेतु रसद समर्थन के लिए तुर्की ग्रैंड नेशनल असेंबली का 'नहीं' पर वोट करने और जून 2010 में ईरान के खिलाफ संयुक्त राष्ट्र के अनिवार्य प्रतिबंधों पर तुर्की की रणनीति से इस दिशा में साफ संकेत मिलते हैं।

अरब विद्रोह

एकेपी के रूढ़िवादी घरेलू शक्ति आधार और इसके वैचारिक झुकाव को देखते हुए, इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि तुर्की भी इस्लामी कारकों को अधिक सख्ती से उठाने और इस्लामी दुनिया में अपनी जगह बनाने के इच्छुक था। तुर्की ने मध्य पूर्व और उत्तरी अफ्रीका में राजनीतिक इस्लाम और इस्लामी आतंकवादी समूहों का प्रतिनिधित्व करने वाली ताकतों को गले लगाया और उनसे संबद्धता कायम की। और, इसे अरब विद्रोह के दौरान उन क्षेत्रों में अपने राजनीतिक प्रभाव का विस्तार करने का एक अवसर मिला जो कभी ओटोमन साम्राज्य का हिस्सा थे और साथ ही इस्लामी दुनिया में एक नेता के रूप में अपनी साख को चमकाने का भी अवसर प्राप्त हुआ।

एकेपी के रूढ़िवादी घरेलू शक्ति आधार और इसके वैचारिक झुकाव को देखते हुए, इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि तुर्की भी इस्लामी कारकों को अधिक सख्ती से उठाने और इस्लामी दुनिया में अपनी जगह बनाने के इच्छुक था।

तुर्की ने मुबारक के विरुद्ध आन्दोलन का समर्थन किया। मुबारक के अपदस्थ होने के तुरंत बाद राष्ट्रपति अब्दुल्ला गुल ने मिस्र का दौरा किया और मुस्लिम ब्रदरहुड केनेताओं से मुलाकात की। दावुतोग्लू ने मिस्र के साथ संबंधों को "लोकतंत्र की धुरी" के रूप में संदर्भित किया। सितंबर 2011 में एर्दोगन की काहिरा यात्रा को विजयवाद का बयार के रूप में चिह्नित किया गया। उक्त प्रतिनिधिमंडल में

छह मंत्री और 200 कारोबारी शामिल थे। तुर्की में कई लोगों का मानना था कि अरब दुनिया में विरोध प्रदर्शन 'अंकारा पल' के आगमन का प्रतिनिधित्व करते हैं। एर्दोगन के करीबी सहयोगी इब्राहिम कालिन ने सीएनएन को बताया कि यात्रा का उद्देश्य न्याय, स्वतंत्रता, पारदर्शिता और कानून के शासन... मूल्यों के आधार पर एक लोकतांत्रिक सामाजिक-राजनीतिक व्यवस्था स्थापित करने के अपने संघर्ष में मिस्र के लोग 'के लिए समर्थन' दिखाना था जो तुर्की द्वारा अपनी घरेलू और विदेश नीति में लागू किया गया है। एर्दोगन के नेतृत्व में तुर्की के आर्थिक कायापलट ने एक लोकप्रिय रूप से निर्वाचित नेता की छवि में निखार लाया और, विशेष रूप से मुस्लिम दुनिया के लिए, फिलिस्तीनी हितों के लिए उसके स्पष्ट समर्थन और मावी मारमारा घटना के बाद इजरायल के प्रति कड़ी प्रतिक्रिया से इसमें और इजाफा हुआ। तुर्किए द्वारा राष्ट्रपति बशर अल-असद की आलोचना भी अधिक मुखर और तेज हो गया और वह समय के साथ सीरिया के राष्ट्रपति को हटाने के लिए प्रतिबद्ध हो गया।

'अंकारा पल' बहुत संक्षिप्त था। खाड़ी में स्थापित शासन व्यवस्थाएँ तुर्की के तौर-तरीकों से सावधान हो गए। तुर्की को विघटनकारी शक्ति के रूप में देखा जाने लगा। अरब विद्रोह का शांत होने-विशेष रूप से मिस्र में मुस्लिम ब्रदरहुड के अपदस्थ होने-की घटनाएं इस क्षेत्र में तुर्की की महत्वाकांक्षाओं को चोट पहुँचायीं। एर्दोगन ने मिस्र के घटनाक्रम का वर्णन तख्तापलट के रूप में किया और अपमानजनक शब्दों में सीसी को संदर्भित किया। तुर्की-कतर धुरी को भी अच्छी नजर से नहीं देखा गया और तुर्कीये ने खुद को मिस्र, सऊदी अरब और संयुक्त अरब अमीरात के खिलाफ खड़ा पाया। दूसरी ओर, असद के लिए रूसी और ईरानी समर्थन इन देशों के साथ तुर्की के संबंधों में एक पीड़ादायक बिंदु बन गया।

तुर्की सीरिया में अमेरिकी नीति से भी निराश हो गया। वर्ष 2014 के मध्य तक, इस्लामिक स्टेट (आईएस) और अल-नुसरा जैसे अत्यधिक कट्टरपंथी समूहों द्वारा उत्पन्न खतरा बहुत वास्तविक था। हालांकि, तुर्की पर, असद को हटाने का जुनून सवार था, उसे कट्टर असद-विरोधियों को और भी अधिक समर्थन देते हुए देखा गया। अक्तूबर 2014 में आईएस ने तुर्की की सीमा से सटे उत्तरी सीरिया के कुर्द शहर कोबाने पर कब्जा कर लिया था। कुर्दिश वाई.पी.जी. (पीपुल्स डिफेंस यूनिट्स) ने कड़ा प्रतिरोध किया और उन्होंने पश्चिमी सहानुभूति और भौतिक समर्थन प्राप्त किया। दूसरी ओर, तुर्की ने कहा कि आईएस और वाईपीजी दोनों आतंकवादी संगठन हैं और पी.के.के. और वाई.पी.जी. के बीच कोई अंतर नहीं है। तुर्की ने सीमा को बंद कर दिया और कोबाने के पतन का इंतजार करना लगा। अंत में, संयुक्त राज्य अमेरिका ने घिरे हुए कुर्दों को हवाई मार्ग से राहत सामग्री पहुँचायी और आई.एस. का सामने करने में वाई.पी.जी. को एक सक्षम ताकत के रूप में खोज की। तुर्की को अपने क्षेत्र से हो कर अवैध प्रवासियों और शरणार्थियों के पश्चिम की ओर जाने के मामले की अनदेखी करते हुए भी पाया गया और यहाँ तक कि यूरोपीय देशों से राहत पाने के लिए इस कार्ड को खेलने में संलिप्त पाया गया।

वर्ष 2015 के अंत तक पारंपरिक पश्चिमी सहयोगियों के साथ तुर्की के संबंध न केवल तनावपूर्ण हो गये थे, बल्कि तुर्की के बिना किसी समस्या के शून्य पड़ोसी थे।

तुर्की की घरेलू राजनीति से कई यूरोपीय देशों में उत्पन्न होने वाले तनावों ने यूरोप साथ तुर्की के संबंधों में और मुश्किलें बढ़ा दीं। इस बीच, 24 नवंबर 2015 को तुर्की ने सीरिया-तुर्की सीमा के पास एक रूसी लड़ाकू विमान को मार गिराया।

रूस ने सीरिया में तुर्की समर्थक गुटों को लक्षित करने के साथ-साथ तुर्की के विरुद्ध कई कदमों की घोषणा करके जवाबी कार्रवाई की। इस प्रकार, वर्ष 2015 के अंत तक पारंपरिक पश्चिमी सहयोगियों के साथ तुर्की के संबंध न केवल तनावपूर्ण हो गये थे, बल्कि तुर्की के बिना किसी समस्या के शून्य पड़ोसी थे।

एर्दोगन सिद्धांत

वर्ष 2016 में थोड़े से समयांतराल में हुई तीन घटनाओं ने तुर्की की विदेश नीति में बदलाव लाया: दावुतोग्लू ने मई 2016 में प्रधानमंत्री के पद से इस्तीफा दे दिया; अगले महीने तुर्की ने रूस से अपने करतूतों के लिए खेद व्यक्त की और माफ़ी मांगी; तथा, तुर्की जुलाई के मध्य में तख्तापलट की कोशिश से हिल गया। दावुतोग्लू के इस्तीफे का मतलब था कि एर्दोगन के विचार तुर्की की विदेश नीति को और भी अधिक हद तक प्रभावित करने के लिए आए थे और यह आंतरिक और बाहरी दोनों आयामों में कुर्द मुद्दे के संबंध में विशेष रूप से महत्वपूर्ण था। दूसरी बात भी स्वीकार्य था कि जहां रूस द्वारा लगाया गया आर्थिक लागत तुर्किए के लिए बड़ा था, वहीं तुर्की की सीरिया नीति पर रूसी कार्रवाइयों के निहितार्थ भी थे। विफल तख्तापलट की कोशिश के प्रति पश्चिमी प्रतिक्रिया तुर्की के पारंपरिक सहयोगियों के खिलाफ एर्दोगन की शिकायतों की सूची में एक अन्य बिंदु जुड़ गया और यह ऐसी घटना थी कि जिसके बाद उसे रूस के साथ और अधिक निकटता से काम करने की दिशा में आगे बढ़ते हुए देखा गया। तुर्की के विद्वानों ने कहा है कि 'एर्दोगन सिद्धांत' ने दावुतोग्लू सिद्धांत को बदल दिया। निश्चित रूप से, 'एर्दोगन सिद्धांत' एक अधिक मजबूत, आक्रामक विदेश नीति का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें तुर्की को न केवल छद्म रूप से बल्कि सीधे तौर पर भी सैन्य शक्ति का प्रयोग करते हुए देखा गया। सीरिया, लीबिया और पूर्वी भूमध्यसागरीय क्षेत्र शक्ति प्रक्षेपण के ज्वलंत उदाहरण थे।

'एर्दोगन सिद्धांत' एक अधिक मजबूत, आक्रामक विदेश नीति का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें तुर्की को न केवल छद्म रूप से बल्कि सीधे तौर पर भी सैन्य शक्ति का प्रयोग करते

हुए देखा गया। सीरिया, लीबिया और पूर्वी भूमध्यसागरीय क्षेत्र शक्ति प्रक्षेपण के ज्वलंत उदाहरण थे।

सीरिया, लीबिया और पूर्वी भूमध्यसागर

सीरिया में बशर अल-असद की सफलताओं और आईएस के खिलाफ कुर्द मिलिशिया के अभियानों ने तुर्की को अपने रुख की फिर से जांच करने के लिए मजबूर किया। अल-असद के प्रति रूस और ईरान के प्रतिबद्ध रहने के कारण, तुर्किए अल-असद को छद्म रूप से या सीधे तौर पर हटाने की उम्मीद नहीं कर सकता था। इसके साथ ही, तुर्की वाई.पी.जी. को अमेरिकी सहायता और सीरिया के साथ की सीमा पर एक कुर्द प्रभुत्व वाले सन्निहित क्षेत्रीय स्थान की संभावना से चिंतित था। रूस के साथ तालमेल के बाद, तुर्की ने सीरिया में सैन्य अभियान चलाया (अगस्त 2016 में ऑपरेशन यूफ्रेट्स शील्ड, जनवरी 2018 में ऑपरेशन ओलिव ब्रांच, अक्तूबर 2019 में ऑपरेशन पीस स्प्रिंग और फरवरी 2020 में ऑपरेशन स्प्रिंग शील्ड)। इन्हें सीरिया की सीमा पर कुर्द बलों के खिलाफ निर्देशित किया गया था, जिससे सीरियाई सेना को इदलिब तक मार्च करने से रोक दिया गया था, और इससे सीरिया से तुर्की तक शरणार्थियों की आमद को रोका जा सका। तुर्की उत्तरी सीरिया में कुछ क्षेत्रों पर अपनी पकड़ स्थापित करने में सक्षम रहा है और इस तरह से सीरिया में अंतिम परिणामों पर उसका एक प्रभाव रहा है। सीरिया में हस्तक्षेप, घरेलू स्तर पर रूढ़िवादी और राष्ट्रवादी मतदाताओं के बीच समर्थन हासिल करने में भी काम आया।

सीरिया में, जहां कुर्द और शरणार्थी समस्याओं का तुर्की की सुरक्षा चिंताओं पर सीधा असर पड़ा, के विपरीत लीबिया में तुर्की की नीति लीबिया में काम करने वाले तुर्की नागरिकों के भाग्य और उस देश में बड़े पैमाने पर तुर्की के निवेश संबंधी चिंताओं से अधिक निर्देशित थी। इस प्रकार, शुरुआती तौर पर, तुर्की नाटो ऑपरेशन में एक अनिच्छुक भागीदार था और इसके बजाय वह संघर्ष के राजनीतिक समाधान का समर्थन करता था। जबकि तुर्की ने गद्दाफी के निष्कासन के बाद शुरू हुई संक्रमण प्रक्रिया का स्वागत किया, लीबिया में अन्य क्षेत्रीय नेताओं की तरह, तुर्की ने भी स्थानीय भागीदारों के साथ गठजोड़ किया। मुस्लिम ब्रदरहुड के संरक्षण को देखते हुए, जस्टिस एंड कंस्ट्रक्शन पार्टी तुर्की की स्वाभाविक पसंद थी। वर्ष 2015 तक लीबिया में दो मुख्य शक्ति के केंद्र थे और प्रतिस्पर्धी हितों के अलावा, इन दो शक्ति केंद्रों के बाहरी संरक्षकों के बीच वैचारिक और राजनीतिक रणनीतिक पैटर्न उतनी ही स्पष्ट था जितना कि वह मध्य पूर्व में था। त्रिपोली में, जहां मुस्लिम ब्रदरहुड और इस्लामवादी तत्व प्रमुख थे, गर्वमेंट ऑफ नेशनल एकॉर्ड (जीएनए) को तुर्की और कतर से समर्थन प्राप्त हुआ। जनरल हफ़्तेर की अध्यक्षता में

तोब्रुक में एक अन्य शक्ति केंद्र को संयुक्त अरब अमीरात और मिस्र का समर्थन प्राप्त था। जनरल हफ्तार ने अप्रैल 2019 में एक सैन्य अभियान शुरू किया और त्रिपोली पर अधिकार करने की धमकी दी। तुर्की ने हथियार प्रदान करके, और जी.एन.ए. बलों की सहायता के लिए सीरियाई थिएटर से विदेशी लड़ाकों को परिवहन या उन्हें सक्षम कर जी.एन.ए. को अधिक सहायता देकर प्रतिक्रिया व्यक्त की। तुर्की ने हालांकि इसकी एक कीमत निकाली। नवंबर 2019 में, तुर्की और जी.एन.ए. ने दक्षिण-पश्चिम तुर्की से पूर्वोत्तर लीबिया तक एक ई.ई.जेड. की स्थापना के लिए एक ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए।

> सीरिया, लीबिया और पूर्वी भूमध्यसागर में तुर्की की नीतियों के परिणामस्वरूप यूरोपीय संघ के साथ एक संस्था के रूप में और फ्रांस जैसी प्रमुख यूरोपीय शक्तियों के साथ संबंधों में तनाव उत्पन्न हुआ।

जबकि इस कदम ने लीबिया में संघर्ष को पूर्वी भूमध्यसागरीय क्षेत्र में प्रतिस्पर्धी दावों के साथ जोड़ा और विशेष रूप से सीरिया में ग्रीक दावों की अवहेलना की, जब तुर्की की संसद ने जनवरी 2020 में लीबिया में सैनिकों की तैनाती को मंजूरी दी और तुर्की सेना की उपस्थिति और तैनाती को आगे बढ़ाया तो तुर्की एक कदम आगे बढ़ गया। त्रिपोली पर हफ्तार के आक्रमण को प्रभावी ढंग से रोका गया और खदेड़ दिया गया। हफ़्तेर का आक्रामण और इस के परिणाम स्वरूप हुए तुर्की हस्तक्षेप (और अन्य शक्तियों के) ने सिर्ते-जुफ़्रा धुरी-प्रतिस्पर्धी हितों के लिए रेडलाइन पर जमीनी तौर पर स्थिति को ठंडा कर दिया-और लीबिया में एक राजनीतिक समझौते के प्रयासों को पुनर्जीवित किया।

लीबिया के संघर्ष ने पूर्वी भूमध्यसागरीय स्थिति को जटिल बना दिया। जहां तक साइप्रस का संबंध है, तुर्की यूरोपीय संघ के खिलाफ ऐतिहासिक शिकायतों को सहन करता है। समय के साथ तुर्की की स्थिति सख्त हो गई और यह मानते हुए कि यूरोपीय संघ तुर्की और तुर्की साइप्रस के लिए उचित नहीं रहा है, तुर्की ने यह भी सुझाव दिया है कि साइप्रस मुद्दे का एकमात्र अन्य विकल्प दो राज्य समाधान है। एजियन और भूमध्य सागर में समुद्री विवाद भी लंबे समय से चले आ रहे हैं। द्वीपों की संप्रभुता, समुद्री जल के परिसीमन और ई.ई.जेड. और हवाई क्षेत्र पर तुर्की की स्थिति ग्रीस और साइप्रस के साथ असंगत व परस्पर विरोधी है, बाद के दोनों अर्थात् ग्रीस और साइप्रस को यूरोपीय संघ के समर्थन प्राप्त है। समुद्र में हाइड्रोकार्बन संसाधनों की खोज ने कठिनाइयों को बढ़ा दिया है। क्षेत्र में सैन्य उपस्थिति को मजबूत करने के अलावा समय-समय पर स्वयं के प्रयासों द्वारा खोजपूर्ण और ड्रिलिंग गतिविधियों को अंजाम देकर तुर्की ने प्रतिक्रिया व्यक्त की है। इस बीच, पूर्वी भूमध्यसागरीय गैस फोरम, फिलिया फोरम, और

ग्रीस, इज़राइल एवं साइप्रस आदि से जुड़ी त्रिपक्षीय वार्ता जैसे कई क्षेत्रीय सहयोग मंच सामने आए हैं, जिन्हें तुर्की अपने हितों के खिलाफ गठबंधन के तौर पर लेता है।

यूरोपीय संघ और संयुक्त राज्य

सीरिया, लीबिया और पूर्वी भूमध्यसागर में तुर्कये की नीतियों के परिणामस्वरूप यूरोपीय संघ के साथ एक संस्था के रूप में और फ्रांस जैसी प्रमुख यूरोपीय शक्तियों के साथ संबंधों में तनाव उत्पन्न हुआ। यूरोपीय शक्तियाँ वाई.पी.जी. को लक्षित करने वाले तुर्की सैन्य अभियानों और यूरोपीय संघ को धमकी देने के लिए तुर्की द्वारा शरणार्थी मुद्दे को एक राजनीतिक हथियार के रूप में इस्तेमाल करने से भी नाखुश थीं। यूरोपीय संघ के साथ परिग्रहण वार्ता रुकी हुई थी और जुलाई 2019 में यूरोपीय संघ ने यूरोपीय संघ-तुर्की संघ परिषद और कई उच्च स्तरीय क्षेत्रीय संवाद तंत्रों की बैठकों को भी रद्द कर दिया। एक हवाई परिवहन समझौते पर बातचीत भी निलंबित कर दी गई थी। वर्ष 2020 में तनाव बढ़ना जारी रहा, जिसके कारण ग्रीस ने अपने नौसैनिक बलों को लामबंद कर लिया और ग्रीस और साइप्रस के समर्थन में इस क्षेत्र में फ्रांसीसी युद्धपोतों की आवाजाही शुरु कर दी। रूस के प्रति झुकाव ने एक और पारंपरिक साझेदार, संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ संबंधों में कड़वाहट बढ़ा दी। तुर्की द्वारा रूस से एस-400 वायु रक्षा प्रणाली की खरीद के कारण एफ-35 कार्यक्रम निलंबित कर दिया गया और अंततः यह तुर्की की रक्षा खरीद एजेंसी के खिलाफ प्रतिबंधों का कारण बना।

यूरोपीय संघ और संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ तुर्की के संबंध प्रदर्शित करते हैं कि तुर्की के निर्णयकर्ताओं को यह विश्वास नहीं है कि लंबे समय से चली आ रही पारंपरिक साझेदारी और नाटो छतरी के बावजूद, तुर्की के हित हमेशा या पूरी तरह से पश्चिमी हितों के साथ मेल खाएंगे। इसलिए ऐसी परिस्थितियों में जहां यह महसूस किया गया कि पश्चिमी साझेदारों द्वारा इसके प्रमुख हितों की अनदेखी की जा रही है, इसने उनसे अलग हो कर स्वतंत्र रूप से कार्य किया और अन्य भागीदारों के साथ काम किया। हालांकि पारंपरिक संबंधों में महत्वपूर्ण राजनीतिक, सुरक्षा संबंधी और आर्थिक हितों की भी स्वीकार्यता है और इन कारणों से तुर्की के नाटो से दूर जाने या यूरोपीय संघ के साथ संबंधों में पूर्ण विराम लगाने की संभावना नहीं है। इन्हीं कारणों से, पश्चिम भी ऐसी स्थिति के खिलाफ है जहां तुर्की रूसी के पाले में चले जाएं।

> रूस के प्रति झुकाव ने एक और पारंपरिक साझेदार, संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ संबंधों में कड़वाहट बढ़ा दी।

हालांकि यह यूक्रेन की क्षेत्रीय अखंडता के लिए समर्थन का दावा करता है और उसने यूक्रेन को ड्रोन की आपूर्ति की है, तुर्की रूस के खिलाफ प्रतिबंधों के साथ नहीं गया है।

रूस

बहादुरी दिखाने के बावजूद तुर्की वर्ष 2015-16 में रूस के साथ गतिरोध के परिणामों से प्रभावित रहा। यह देखते हुए कि रूस बशर अल-असद (और संयुक्त राज्य अमेरिका व अन्य पश्चिमी शक्तियां नो-फ्लाई ज़ोन स्थापित करने के लिए अनिच्छुक थे और आईएस से निपटने में अधिक व्यस्त थे) के लिए दृढ़ता पूर्वक प्रतिबद्ध है, सीरिया में शासन परिवर्तन के उद्देश्य को अधिक सीमित उद्देश्यों के लिए छोड़ दिया। तुर्की ने स्वीकार किया कि सीरिया में शासन परिवर्तन एक व्यवहार्य विकल्प नहीं है और सीरिया में उसके प्रमुख हित अर्थात, सीरिया के साथ अपनी सीमा से कुर्द खतरे की संभावना को समाप्त करना और साथ ही यह सुनिश्चित करना कि किसी भी भविष्य के समझौते में तुर्की का एक पक्ष होगा, संयुक्त राज्य अमेरिका के बजाय रूस (और ईरान) के साथ काम करके सीरियाई संघर्ष को समाप्त करना बेहतर रहेगा। यह महत्वपूर्ण है कि सीरिया में वाई.पी.जी. के खिलाफ तुर्की का सैन्य अभियान रूस के साथ तालमेल के पश्चात ही हुए। दूसरी ओर, रूस के लिए, तुर्की के साथ हुए सौदे अल-असद को सीरियाई क्षेत्र के एक बहुत बड़े हिस्से पर फिर से नियंत्रण स्थापित करने, वाई.पी.जी. को अल-असद शासन से कवर मांग करने, और तुर्की से अधिक लाभ उठाने में सक्षम बनाने के लिए उपयोगी साबित हुए ताकि अब ऐसा लगे कि शासन की सेनाओं द्वारा इदलिब पर चौतरफा हमले के बीच अकेला रूस खड़ा है। हालांकि अन्यत्र, जैसा कि लीबिया संघर्ष के मामले में, रूस और तुर्की ने अलग-अलग हितों का अनुसरण किया है और प्रतिद्वंद्वी गठबंधनों का समर्थन किया है। हालांकि यह यूक्रेन की क्षेत्रीय अखंडता के लिए समर्थन का दावा करता है और उसने यूक्रेन को ड्रोन की आपूर्ति की है, तुर्की रूस के खिलाफ प्रतिबंधों के साथ नहीं गया है। इसने रूस और यूक्रेन के साथ अपने संबंधों का उपयोग यूक्रेनी अनाज शिपमेंट के निर्यात को सुविधाजनक बनाने वाले समझौते के लिए किया है और इसलिए इस क्षेत्र में अपनी प्रासंगिकता को रेखांकित किया है।

तुर्की नेतृत्व ने शक्ति के वैश्विक संतुलन में पूर्व की ओर विस्थापन को मान्यता दी है और तदनुसार चीन से रिश्ते गढ़ने पर ध्यान दिया है।

तुर्की नेतृत्व ने शक्ति के वैश्विक संतुलन में पूर्व की ओर विस्थापन को मान्यता दी है और तदनुसार चीन से रिश्ते गढ़ने पर ध्यान दिया है। यूएनएससी के एक स्थायी सदस्य के रूप में इसके स्पष्ट महत्व के अलावा, चीन के साथ संबंधों के विकास से तुर्की को रणनीतिक स्वायत्तता की तलाश में मदद मिलेगी और इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि इसकी महत्वाकांक्षी बुनियादी ढांचा से जुड़ी परियोजनाओं के लिए धन और निवेश में सहायता मिलेगी। तुर्की को उम्मीद है कि बीआरआई इसकी खुद की मिडिल कॉरिडोर परियोजना के साथ तालमेल बिठाएगा।

शून्य समस्या नीति की वापसी

पिछले दो दशकों में निस्संदेह तुर्की की विदेश नीति अधिक मुखर रही है। तुर्की ने ओजल काल में इस दिशा में कदम बढ़ाना शुरू कर दिया था। तुर्की की राष्ट्रीय सत्ता के लक्षणों को देखते हुए शायद यह अपरिहार्य था। दावुतोग्लु सिद्धांत ने इसे अभिव्यक्ति दी। एक विश्व नेता के रूप में पहचाने जाने और तुर्की को एक प्रभावशाली वैश्विक रणनीतिकार के रूप में तब्दील करने की एर्दोगन की महत्वाकांक्षा अपने आप में एक अधिक जुझारू दृष्टिकोण के रूप में सामने आया। तुर्की का तीव्र आर्थिक विकास और उसके रक्षा उद्योग का विकास (टीबी2 ड्रोन ने एक महान प्रतिष्ठा हासिल की है और तुर्की के रक्षा उद्योग की ताकत का प्रदर्शन किया है) ने सॉफ्ट पावर के उपकरणों के साथ मिलकर इसे अपने पड़ोस में निर्णायक रूप से कार्य करने के साथ-साथ अपने से दूर क्षेत्रों तक अपनी पहुँच के विस्तार का आत्मविश्वास दिया है। इस प्रकार, सीरिया, इराक, नागोर्नो-काराबाख और लीबिया में हस्तक्षेप और कतर और सोमालिया में तुर्की सैन्य ठिकानों के साथ-साथ अफ्रीका तक तुर्की की प्रभावशाली पहुंच थी। एक अधिक आक्रामक विदेश नीति इस धारणा से प्रवाहित हुई कि तुर्की जमीनी स्थिति को बदलने में सक्षम हो सकता है और मुस्लिम ब्रदरहुड और हमास जैसे संगठनों के साथ गठबंधन करके और इस्लामी उग्रवादी समूहों का उपयोग करके अपनी नेतृत्व भूमिका को सफलतापूर्वक पेश कर सकता है। यह पीकेके/वाईपीजी से तुर्की की खतरे की धारणा का उत्पाद भी था, जो बदले में तुर्की की घरेलू राजनीति से जुड़ा था। पीकेके और वाईपीजी के खिलाफ आक्रामकता ने राष्ट्रवादी मतदाताओं के लिए एर्दोगन की अपील को बल दिया और लगातार चुनावों में उनकी अच्छी सफलता दिलायी।

वर्ष 2020 के अंत तक तुर्की ने सीरियाई कुर्दों को सीरिया के साथ सीमा पर प्रभाव क्षेत्र स्थापित करने से रोक दिया था, लीबिया में खुद को और अधिक मजबूती से जमा लिया था, और खुद को इस स्थिति में रखा था कि पूर्वी भूमध्य सागर में भविष्य की किसी भी ऊर्जा गलियारा में इसकी ऊर्जा सुरक्षा आवश्यकताओं की पूरी तरह से अनदेखी नहीं की जाएगी। हालांकि, इसी के साथ तुर्की ने भी अपने

पश्चिमी भागीदारों के साथ खुद को मुश्किलों में पाया। रूस के साथ संबंध असहमति से रहित नहीं थे और उइगर मुद्दे के कारण चीन के साथ संबंध पूरी तरह से सहज नहीं थे।

वर्ष 2021 की शुरुआत में, एर्दोगन ने इस क्षेत्र की विशिष्ट कूटनीति को अपनाया और क्षेत्रीय शक्तियों के साथ संबंधों को फिर से स्थापित करने के लिए आगे बढ़ा। तुर्की ने इज़राइल, सऊदी अरब और संयुक्त अरब अमीरात के साथ राजनयिक और खुफिया संपर्क जोड़ना शुरू किया।

खाड़ी और मध्य पूर्व के रूप में, शायद यह अहसास था कि सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, मिस्र और इज़राइल जैसे दिग्गजों के साथ क्षेत्र में टकराव की निरंतरता अनुत्पादक थी और इस क्षेत्र में जिस तरह का खुलापन एक दशक पहले तुर्की ने खुद के लिए देखा था, अरब विद्रोह के पुनः खड़े होने के साथ समाप्त हो गया था। मध्य पूर्व का परिदृश्य भी अब्राहम समझौते के साथ बदल गया था और मध्य पूर्व में बाइडेन प्रशासन की निष्क्रिय नीति ने अनिश्चितताओं को जोड़ा। दिसंबर 2019 में मलेशिया द्वारा बुलाई गई "मुस्लिम 5 समिट" की असफलता ने इस्लामिक दुनिया के भीतर के टकरावों को उजागर किया और साथ ही इस्लामी दुनिया के सऊदी नेतृत्व को चुनौती देने के लिए तुर्की की महत्वाकांक्षाओं की सीमाओं को भी उजागर किया।

वर्ष 2021 की शुरुआत में, एर्दोगन ने इस क्षेत्र की विशिष्ट कूटनीति को अपनाया और क्षेत्रीय शक्तियों के साथ संबंधों को फिर से स्थापित करने के लिए आगे बढ़ा। तुर्की ने इज़राइल, सऊदी अरब और संयुक्त अरब अमीरात के साथ राजनयिक और खुफिया संपर्क जोड़ना शुरू किया। मार्च 2022 में राष्ट्रपति इसहाक हर्ज़ोग की तुर्की यात्रा के बाद मई में तुर्की के विदेश मंत्री की इज़राइल यात्रा हुई। यायर लापिड ने एक महीने बाद विदेश मंत्री के रूप में अंकारा का दौरा किया। तुर्की के अधिकारियों ने खुलासा किया कि उन्होंने तुर्की में इजरायली पर्यटकों के अपहरण की ईरानी साजिश को नाकाम कर दिया है। तुर्की और इज़राइल ने यह भी घोषणा की कि चार साल के अंतराल के बाद, वे फिर से राजदूतों का आदान-प्रदान करेंगे। अप्रैल 2022 में तुर्की की एक अदालत ने मुकदमे की सुनवाई को सऊदी अरब में स्थानांतरित करके खशोगी अध्याय को बंद कर दिया, इस प्रकार सऊदी-तुर्की संबंधों में एक बड़ी अड़चन को दूर हुआ और उस महीने के अंत में राष्ट्रपति एर्दोगन की सऊदी अरब यात्रा के लिए मंच तैयार हुआ। यूएई के क्राउन प्रिंस मोहम्मद बिन जायद ने नवंबर 2021 में तुर्की का दौरा किया, जिसके दौरान 10 अरब अमेरिकी डॉलर के अमीराती निवेश का वादा करने वाले कई समझौते संपन्न हुए। फरवरी 2022 में

राष्ट्रपति एर्दोगन की यूएई यात्रा से यह संदेश मिला कि यूएई और तुर्की अपने संबंधों में एक नया पृष्ठ बदल रहे हैं। व्यापार, रक्षा, कृषि और स्वास्थ्य जैसे विभिन्न क्षेत्रों को कवर करने वाले तेरह समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए। यूएई और तुर्की ने 4.7 बिलियन अमेरिकी डॉलर के करेंसी स्वैप समझौते पर भी हस्ताक्षर किए।

शेख खलीफा की मृत्यु पर शोक व्यक्त करने के लिए एर्दोगन ने मई 2022 में फिर से संयुक्त अरब अमीरात का दौरा किया। स्पष्ट रूप से उम्मीद यह है कि सऊदी अरब और यूएई इन बाजारों में तुर्की के निर्यात को बढ़ावा देते हुए ऋण और निवेश प्रदान करके तुर्की के आर्थिक संकट को दूर करने में मदद करेंगे। मिस्र के साथ सुलह की एक शांत प्रक्रिया भी शुरू की गई थी। उप विदेश मंत्री सेदत ओनल के नेतृत्व में एक तुर्की प्रतिनिधिमंडल ने मई 2021 में काहिरा का दौरा किया और मिस्र ने सितंबर में अंकारा में एक प्रतिनिधिमंडल भेजकर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। कथित तौर पर, इस खोजपूर्ण वार्ता में लीबिया, पूर्वी भूमध्यसागरीय, इज़राइल-फिलिस्तीनी संघर्ष और मिस्र के मुस्लिम ब्रदरहुड से संबंधित चिंताएँ शामिल थीं।

> मध्य पूर्व में शक्तियां जमीनी वास्तविकताओं, क्षेत्र से कथित अमेरिकी छंटनी, यूएस-रूस संबंधों और चीन-यूएस प्रतिद्वंद्विता को ध्यान में रखते हुए आपस में समीकरणों और हितों को फिर से तैयार कर रही हैं।

तुर्की द्वारा सिसी शासन की आलोचना कम कर दी गयी और इस साल अप्रैल में तुर्किए में एक मुस्लिम ब्रदरहुड संबद्ध सैटेलाइट चैनल बंद कर दिया गया। टीआरटी न्यूज़ चैनल के साथ हाल ही में एक साक्षात्कार में, एर्दोगन ने टिप्पणी की कि मिस्र के साथ निचले स्तर पर वार्ता जारी है और "इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि यह उच्च स्तर पर भी होगा, जैसा कि हम एक दूसरे को समझते हैं।" तुर्की और अर्मेनिया के बीच संबंधों में जमी बर्फ भी अस्थायी रूप से पिघलना शुरु हुआ है। दिसंबर 2021 में दोनों देशों द्वारा नियुक्त विशेष दूत संबंधों के सामान्यीकरण पर चर्चा कर रहे थे और इस दिशा में कुछ कदम उठाए गए हैं जैसे कि तीसरे देश के नागरिकों के लिए अपनी साझा सीमा खोलना और प्रत्यक्ष कार्गो उड़ान संचालन शुरू करना। अर्मेनियाई विदेश मंत्री, अरारत मिर्ज़ोयन ने मार्च 2022 में एंटाल्या डिप्लोमेसी फोरम में भाग लिया, जिसके हाशिये पर उन्होंने विदेश मंत्री कैवुसोग्लू के साथ संबंधों की बहाली पर बातचीत की। समानांतर रूप से, तुर्की यूरोपीय संघ के साथ आगे के टकराव से पीछे हट गया जिसके कारण उसे यूरोपीय संघ के प्रतिबंधों का जोखिम उठाना पड़ा था, पूर्वी भूमध्यसागरीय क्षेत्र में ड्रिलिंग गतिविधियों को रोक दिया, घोषणा की कि वह यूरोप और संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ बेहतर

संबंध चाहता है, और फिर से ग्रीस के साथ बातचीत शुरू की। पी.के.के. से संबंधित चिंताओं को दूर करने के बाद स्वीडन और फिनलैंड के लिए नाटो की सदस्यता के मुद्दे पर भी तुर्की नरम पड़ गया और फिनलैंड और स्वीडन ने आतंकवाद के खिलाफ तुर्की की लड़ाई का समर्थन करने और जून 2022 में मैड्रिड में नाटो शिखर सम्मेलन में आतंकवादी संदिग्धों के निर्वासन या प्रत्यर्पण के लिए तुर्की के लंबित अनुरोधों को संबोधित करने का वचन दिया।

मध्य पूर्व में शक्तियां जमीनी वास्तविकताओं, क्षेत्र से कथित अमेरिकी छंटनी, यूएस-रूस संबंधों और चीन-यूएस प्रतिद्वंद्विता को ध्यान में रखते हुए आपस में समीकरणों और हितों को फिर से तैयार कर रही हैं। निराशावादी विश्व आर्थिक दृष्टिकोण एक अन्य कारक है। वैश्विक आर्थिक विकास वर्ष 2021 में 5.7% से घटकर इस वर्ष 2.9% होने की उम्मीद है। तुर्की की अर्थव्यवस्था वर्ष 2018 से नीचे की ओर जा रही है। तुर्की लीरा दबाव में रही है, सितंबर 2017 में लगभग 3.44 डॉलर से गिरकर वर्तमान में 18.22 हो गई है। सितंबर 1998 के बाद से वार्षिक मुद्रास्फीति अपने उच्चतम स्तर पर है। सरकार को बाजार को स्थिर करने के लिए विदेशी मुद्रा भंडार का उपयोग करना पड़ा है। वर्ष 2019 में तुर्की में नगरपालिका चुनाव के परिणाम एर्दोगन के लिए एक अप्रिय आश्चर्य था। इससे उत्साहित होकर तुर्की विपक्ष उन्हें एकीकृत चुनौती देने की कोशिश कर रहा है। छह विपक्षी दलों-टेबल ऑफ़ सिक्स-ने इस साल फरवरी में एक लंबी घोषणा जारी की है, जिसमें एर्दोगन द्वारा शुरू की गई कार्यकारी राष्ट्रपति प्रणाली को उलटने और तुर्की में संसदीय लोकतंत्र को मजबूत करने की मंशा की घोषणा की गई है। एर्दोगन के लिए ये घटनाक्रम चिंताजनक है क्योंकि वह वर्ष 2023 में राष्ट्रपति और संसदीय चुनावों की तैयारी कर रहे हैं। घरेलू दबावों और बाहरी कारकों के संयोजन ने तुर्की की विदेश नीति को फिर से स्थापित कर दिया है। यह उम्मीद करना अवास्तविक है कि तुर्किए आरोपित स्थिति और संपत्तियों को पूरी तरह से छोड़ देगा। एर्दोगन ने इस साल मई में वाई.पी.जी. के खिलाफ एक और ऑपरेशन की धमकी दी है और जुलाई में दोहराया कि तुर्की की सुरक्षा चिंताओं को दूर किए जाने तक सीरिया में एक नया सैन्य आक्रमण एजेंडे में रहेगा। इसी तरह, तुर्की तट के पास कुछ द्वीपों के "सैन्यीकरण" से चिढ़कर तुर्की और ग्रीस के बीच तनाव फिर से बढ़ गया है और एर्दोगन ने ग्रीस को "बहुत दूर नहीं जाने" की चेतावनी दी है। संभवतः, दोनों उदाहरणों में बयानबाजी घरेलू प्रभाव बढ़ाने के लिए थी। बड़ा सवाल यह है कि क्या तुर्की की विदेश नीति में नवीनतम पुनर्संरचना तत्काल चुनावी और आर्थिक मजबूरियों से पैदा हुआ एक सामरिक बदलाव है या क्या यह तुर्की की शक्ति की सीमाओं की मान्यता को दर्शाता है और तुर्की, जैसा कि वह अब खुद के बारे में कहता है कि वह टकराव और अस्थिरता से बचना चाहता है और इसके बजाय अपने हितों को देखते हुए अधिक समझौतावादी दृष्टिकोण अपनाएगा।

श्री राहुल कुलश्रेष्ठ, एक सेवानिवृत्त कैरियर राजनयिक हैं। उन्होंने तुर्की और मिस्र में भारत के राजदूत के रूप में कार्य किया। उन्होंने मॉस्को, न्यूयॉर्क, थिम्पू, यांगून और इस्लामाबाद में भारतीय मिशनों के साथ-साथ नई दिल्ली में विदेश मंत्रालय में भी विभिन्न पदों पर कार्य किया। राजदूत कुलश्रेष्ठ ने परमाणु ऊर्जा विभाग में संयुक्त सचिव के पद पर भी काम किया।

एर्दोगन शासन

के दो दशक

के तहत तुर्की

फजर रहमान सिद्दीकी

"सेना के रवैये को लोकतंत्र के भीतर परिभाषित नहीं किया जा सकता है। जो लोग हथियारों की ताकत पर भरोसा करते हैं, वे लोकतंत्र का निर्माण नहीं कर सकते।"[1]

राष्ट्रपति रेसेप तईप एर्दोगन

परिचय

तुर्की गणराज्य में राष्ट्रपति रेसेप तैयप एर्दोगन के नेतृत्व में जस्टिस एंड डेवलपमेंट पार्टी (अर्थात् ए.के.पी.) के लगभग दो दशकों के शासन को एक असमान प्रक्षेपवक्र द्वारा चिह्नित किया गया है, जिससे परिलक्षित होता है कि उसके शासन काल के दौरान देश की राष्ट्रीय राजनीति में एक अभूतपूर्व स्तर का परिवर्तन हुआ है। यदि तुर्की की राजनीति के दो दशकों की विवेचना की जाए, तो सभी इस बात से सहमत होंगे कि एकेपी के शासन का दूसरा दशक (वर्ष 2012-वर्ष 2022) उसके शासन के पहले दशक (वर्ष 2002-वर्ष 2011) में विकसित राजनीतिक परिवेश की प्रतिकूल छवि को चित्रित करता है। राजनीति की इस विरोधाभासी प्रकृति से यह सिद्ध होता है कि तुर्की अपने ही अतीत के साथ अपना ट्रैक या समानता खो दी है, जिसे पहले खुद एर्दोगन ने विकसित किया है।

एकेपी के सत्ता में आगमन और वर्ष 2002 में प्रधानमंत्री के रूप में एर्दोगन के एक साथ उदय के बाद, देश ने क्रमिक वर्षों में व्यापक आर्थिक विकास देखा। इन वर्षों को इस्लामी लोकतंत्र के साथ एक सफल प्रयोग के रूप में भी चिह्नित किया गया था, जिसे तब अरब नेताओं के लिए एक मॉडल के रूप में सराहा गया था।[2] एर्दोगन राजनीतिक इस्लाम की अपनी वैचारिक मौलिकता के बावजूद लोकतंत्र को मजबूत करने में सक्षम थे, जिसकी अधिकांश आलोचना लोकतंत्र के पश्चिमी लोकाचार के अनुरूप नहीं होने के लिए की गई थी। ।

लेकिन एकेपी के शासन के पहले दशक में लोकतांत्रिक प्रयोग की सफलता के शीघ्र बाद राजनीति के एक नए सेट ने उसकी जगह ले ली, जिसमें राजनीतिक मतभेदों के लिए कम जगह थी। जल्द ही तुर्की संसदीय प्रणाली एक अस्पष्ट राष्ट्रपति प्रणाली[3] के रूप में परिवर्तित हुआ, जिसमें उस समय के राष्ट्रपति के पास असीमित शक्ति थी। एकेपी के शासन के पहले दशक में नए आर्थिक मध्यम वर्ग के उदय के साथ-साथ सकल घरेलू उत्पाद

एकेपी के सत्ता में आगमन और वर्ष 2002 में प्रधानमंत्री के रूप में एर्दोगन के एक साथ उदय के बाद, देश ने क्रमिक वर्षों में व्यापक आर्थिक विकास देखा। इन वर्षों को इस्लामी लोकतंत्र के साथ एक सफल प्रयोग के रूप में भी चिह्नित किया गया था, जिसे तब अरब नेताओं के लिए एक मॉडल के रूप में सराहा गया था।

सेना का निर्वासन-जो एक समय राष्ट्रीय राजनीति में प्रमुख भूमिका निभाया करती थी-राजनीतिक क्षेत्र से एर्दोगन के तहत तुर्की की राजनीति में सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में से एक रहा है।

(जीडीपी) में उच्च वृद्धि देखी गई, लेकिन आर्थिक विकास को भी लोकतंत्र के समान ही दुर्भाग्य का सामना करना पड़ा, और बाद के युग में आर्थिक मामलों में बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार और सत्ता पक्ष का दखल बढ़ता गया। सेना का निर्वासन-जो एक समय राष्ट्रीय राजनीति में प्रमुख भूमिका निभाया करती थी-राजनीतिक क्षेत्र से एर्दोगन के तहत तुर्की की राजनीति में सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में से एक रहा है। पिछले कुछ वर्षों में तुर्की की ओर से पूरे क्षेत्र के साथ व्यापक जुड़ाव प्रदर्शित किया गया है और आज इसकी रणनीतिक, आर्थिक और कूटनीतिक छाप एशिया, अफ्रीका, यूरोप और लैटिन अमेरिका में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। लेकिन हाल के वर्षों में इन व्यापक प्रवृत्तियों को विपरीत स्थिति का सामना करना पड़ा है, जिससे क्षेत्र और पूरे विश्व में तुर्किए के पास कुछ ही सहयोगी रह गए हैं। इसी तरह, एक दशक पहले और बाद में अरब विद्रोह की शुरुआत ने क्षेत्र में शक्ति शून्यता और राष्ट्र-राज्य के पतन ने तुर्की के समक्ष नई सुरक्षा, रणनीतिक और कूटनीतिक चुनौतियाँ खड़ी होती रहीं हैं।

उपर्युक्त के आलोक में, यह पत्र तुर्की के राजनीतिक परिवर्तन के दो दशकों को उजागर करेगा और पी.के.के. एवं तुर्की सरकार के बीच संबंधों की बदलती प्रकृति को भी रेखांकित करेगा। पेपर यह भी जांच करेगा कि कैसे जुलाई 2016 में तख्तापलट की कोशिश ने एर्दोगन के लिए अपने राजनीतिक विरोधियों को वश में करने के लिए एक नया विस्टा खोला।

एर्दोगन और एकेपी का उदय

ओटोमन साम्राज्य के अवशेष के रूप में, तुर्की गणराज्य अपने स्वयं के पूर्व दूरवर्ती भागों जैसे अल्जीरिया, सीरिया या मिस्र की तरह औपनिवेशिक शक्तियों के अधीन नहीं आया। मुस्तफा केमल अतातुर्क के नेतृत्व में तुर्की ने प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति के तुरंत बाद 1923 में स्वतंत्रता हासिल की। बाद के वर्षों में अतातुर्क के शासन ने राजनीति और सेना के बीच राजनीतिक और वैचारिक संबंधों का एक अनूठा संयोग बनाया,[4] जिसने धीरे-धीरे सेना को देश का प्रमुख चौकीदार के रूप में तब्दील कर दिया।

ए.के.पी. के उदय के मार्ग का पता राजनीतिक इस्लाम की ताकतों के अवशेषों से लगाया जा सकता है, जिसकी शुरुआत वर्ष 1970 और वर्ष 1980 के दशक के अंत में दक्षिणपंथ और बामपंथ के बीच वैचारिक विभाजन के बीच हुई थी, और अतातुर्क-शैली की धर्मनिरपेक्षतावादी और लंबे समय से चली आ रही शहरी राजनीति से उत्पन्न निरसता के कारण इसमें कुछ सफलता मिली थी।

ए.के.पी. के सर्वोच्च शिल्पकार, एर्दोगन के उदय को दुनिया भर में लोकलुभावन राजनीति की बढ़ती प्रवृत्ति के प्रतिबिंब के रूप में समझा जा सकता है। उनकी तेजतर्रार बयानबाजी और करिश्माई शैली कभी-कभी उनकी अपनी पार्टी से इतनी आगे निकल जाती थी कि एकेपी के लिए एक वोट जल्द ही अकेले एर्दोगन के लिए एक वोट बन जाता था।

अतातुर्क द्वारा गठित रिपब्लिकन पीपल्स पार्टी (सीएचपी) ने वर्ष 1950 तक गणतंत्र पर शासन किया, उसके बाद डेमोक्रेटिक पार्टी (डी.पी.)[5] का शासन रहा, जिसने बाद के वर्षों में कमलवादी धर्मनिरपेक्षतावादी विचारधारा को वश में कर लिया और बहुदलीय व्यवस्था का मार्ग प्रशस्त किया। डी.पी. के शासन को वर्ष 1960 में हुई सबसे पहला सैन्य तख्तापलट ने बाधित किया और बाद के वर्षों में वर्ष 1970, वर्ष 1980 और वर्ष 1993 में तख्तापलट की एक श्रृंखला देखी गई। यह काल इस्लामवादियों, धर्मनिरपेक्षतावादियों, राष्ट्रवादियों, समाजवादियों और वामपंथियों के बीच राजनीतिक एवं वैचारिक संघर्षों से बाधित रहा।

ए.के.पी. के उदय के मार्ग का पता राजनीतिक इस्लाम की ताकतों के अवशेषों से लगाया जा सकता है, जिसकी शुरुआत वर्ष 1970 और वर्ष 1980 के दशक के अंत में दक्षिणपंथ और बामपंथ के बीच वैचारिक विभाजन के बीच हुई थी[6], और अतातुर्क-शैली की धर्मनिरपेक्षतावादी और लंबे समय से चली आ रही शहरी राजनीति से उत्पन्न निरसता के कारण इसमें कुछ सफलता मिली थी। ए.के.पी. रूढ़िवादी-लोकतांत्रिकों का प्रतिनिधित्व करने का दावा करती है और पार्टी के घोषणापत्र के अनुसार, यह पूर्व और पश्चिम[7] के बीच एक सेतु की तरह काम करती है और इस्लाम और पश्चिम के बीच भी एक संश्लेषण बनाने का इरादा रखती है। स्वयं एर्दोगन के शब्दों में, "एकेपी धर्म को एक सामाजिक मूल्य के रूप में महत्व देती है।"[8] अपने गठन के बाद से, एकेपी शहरी गरीबों के साथ-साथ निम्न और मध्यम वर्ग पर निर्भर थी, जिनकी अतीत की राजनीतिक अस्थिरता और आर्थिक पिछड़ेपन से मोहभंग हो गया था। ए.के.पी. की पहली चुनावी जीत के बाद, एक अखबार की सुर्ख़ियों में "एनाटोलियन क्रांति"[9] पढ़ा गया, जो एनाटोलियन क्षेत्र के अलग-थलग रूढ़िवादी गरीब मुसलमानों के संदर्भ में था, जिन्हें ब्लैक तुर्क के रूप में जाना जाता था, जो लंबे समय से व्हाइट तुर्क के रूप में जाने जाने वाले नागरिक और सैन्य अभिजात वर्ग से अलग-थलग थे।

ए.के.पी. के सर्वोच्च शिल्पकार एर्दोगन के उदय को दुनिया भर में लोकलुभावन राजनीति की बढ़ती प्रवृत्ति के प्रतिबिंब के रूप में समझा जा सकता है। उनकी तेजतर्रार लफ्फाजी और करिश्माई शैली कभी-कभी उनकी अपनी पार्टी से इतनी आगे निकल जाती थी कि ए.के.पी. के लिए एक वोट जल्द ही अकेले एर्दोगन के लिए एक वोट बन जाता था।[10] उसके द्वारा स्वयं को आम जनता से संबंधित व्यक्ति के रूप में पेश करना बड़े चुनावी समूहों को

अपील करता था। धर्मनिरपेक्षतावादियों/अमीरों और रूढ़िवादी/गरीबों का वर्णन करने के लिए श्वेत तुर्कों और काले तुर्कों[11] के उनके अपने प्रचार[12] ने उनकी छवि को गरीबों के रक्षक के रूप में स्थापित किया। एक बार उन्होंने कहा था, "हम गोरे तुर्कों और काले तुर्कों के बीच भेद करते हैं। मैं आपके भाई के रूप में ब्लैक तुर्क से संबंधित हूं।[13] राजनीतिक संवेदनाओं और धार्मिक भावनाओं के लिए उनकी अपील ने उन्हें सभी प्रकार के राजनीतिक लाभ दिए और उन्होंने जनता को प्रेरित करने के लिए हमेशा अपने इस्लामवादी कार्ड को अपने दिल के करीब रखा। उनकी पार्टी जितनी आगे बढ़ी, उतनी ही अधिक वह राष्ट्रीय राजनीति में संस्कारी शख्सियत के रूप में उभरे, और आज उन्हें अक्सर सुल्तान, विश्व नेता, दावोस विजेता, महान गुरु, लॉन्ग मैन, मैन ऑफ लव और चीफ के रूप में संबोधित किया जाता है।[14]

वर्ष 2002 में अपने पहले चुनाव में, ए.के.पी. ने 34% से अधिक मत[15] प्राप्त किए और संसद में पूर्ण बहुमत प्राप्त किया। ए.के.पी. की पहली जीत के बाद, इसके राजनीतिक ग्राफ में वृद्धि जारी रही क्योंकि इसे क्रमशः वर्ष 2007, वर्ष 2011, जून 2015 और फिर नवंबर 2015 के चुनावों में क्रमशः 46.6%, 49.8%, 40.9% और 49.5% मत प्राप्त हुए।[16]

पिछले दो दशकों में तुर्की का राजनीतिक परिवर्तन

एकेपी के शासन का पहला दशक देश के उदार और लोकतांत्रिक परिवर्तन का गवाह बना। राजनीतिक, कानूनी और शैक्षिक सुधारों की एक श्रृंखला पेश की गई। ये सुधार शायद यूरोपीय संघ (ईयू) में पूर्ण सदस्यता प्राप्त करने के लिए तुर्की की बढ़ती महत्वाकांक्षा के साथ अधिक जुड़े थे और इसलिए एकेपी ने यूरोपीय संघ की स्वतंत्रता, धार्मिक स्वतंत्रता, लोकतंत्रीकरण और मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था के मानदंडों के अनुरूप नीतियों को अपनाना शुरू कर दिया। एर्दोगन के शासन के पहले दशक को तीन प्रमुख विशेषताओं द्वारा चिह्नित किया गया था, जिसने देश को शासन के पश्चिमी मॉडल के करीब ला दिया था: लोकतंत्र के लिए गले लगाना, खुले बाजार की अर्थव्यवस्था की ओर बदलाव और मानवाधिकारों के रिकॉर्ड में महत्वपूर्ण सुधार।

एकेपी के शासन का पहला दशक देश के उदार और लोकतांत्रिक परिवर्तन का गवाह बना। राजनीतिक, कानूनी और शैक्षिक सुधारों की एक श्रृंखला पेश की गई। ये सुधार शायद यूरोपीय संघ (ईयू) में पूर्ण सदस्यता प्राप्त करने के लिए तुर्की की बढ़ती महत्वाकांक्षा के साथ अधिक जुड़े थे और इसलिए एकेपी ने यूरोपीय संघ की स्वतंत्रता, धार्मिक स्वतंत्रता, लोकतंत्रीकरण और मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था के मानदंडों के अनुरूप नीतियों को अपनाना शुरू कर दिया।

एर्दोगन की राजनीति में वास्तविक बदलाव वर्ष 2011 में 50% से अधिक मतों के साथ उनकी लगातार तीसरी जीत के बाद आया। अब सरकार ने स्थापित धर्मनिरपेक्ष मॉडल को बदलने की ओर इशारा करते हुए बहुत से खतरनाक संदेश देना शुरू की। एर्दोगन जल्द ही लोकतंत्र, स्वतंत्रता और मानवाधिकारों से संबंधित पिछली बहसों को खारिज करने लगे और इसके बजाय उन पर सवाल उठाना शुरू कर दिया।

अपने शासन के पहले दशक में ए.के.पी. की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धियों में से एक आर्थिक विकास था जिसे उसने बाहरी दुनिया के साथ व्यापार और व्यापारिक संबंध स्थापित करके पूरा किया। सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि-दर में पर्याप्त वृद्धि हुई थी। वर्ष 2011 में, सकल घरेलू उत्पाद में 11.1% की वृद्धि हुई और मुद्रास्फीति वर्ष 2002 में 29.6% की तुलना में वर्ष 2009 में 6.3% से कम हो गई।[17] एर्दोगन के शासन के पहले बारह वर्षों के दौरान, तुर्की की जीडीपी वर्ष 2014 में 798.429 अमरिकी डालर के मुकाबले बढ़ कर तीन गुना हो गई।[18] वर्ष 2013 के एक अध्ययन में अनुमान लगाया गया है कि वहाँ ए.के.पी. की लोकप्रियता और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास के बीच एक मजबूत संबंध था।[19] वर्ष 2005 में, इसकी अर्थव्यवस्था इतनी स्थिर हो गई थी कि सरकार ने अपने पिछले बहु-शून्य बैंक नोटों को खत्म करने का फैसला किया और बहुत कुछ कम शून्यों के साथ एक नई मुद्रा का प्रचलन किया गया।

लेकिन वर्ष 2007 में कार्यालय में अपना पहला कार्यकाल पूरा करने के तुरंत बाद, ए.के.पी. को एक नव-राष्ट्रवादी प्रतिरोध आंदोलन का सामना करना पड़ा, जिसने ए.के.पी. के शासन को सर्वनाश के साथ समानता दी, जो राष्ट्र के अस्तित्व को खतरे में डाल रहा था।[20] वर्ष 2008 में, देश में अपील की सर्वोच्च अदालत कोर्ट कैशेशन (सीसी) ने, केवल एक वोट से एकेपी के नेतृत्व वाली संसद को धर्मनिरपेक्ष विरोधी सक्रियता का केंद्र होने के कारण भंग करने में विफल रही।[21]

एर्दोगन की राजनीति में वास्तविक बदलाव वर्ष 2011 में 50% से अधिक वोटों के साथ उनकी लगातार तीसरी जीत के बाद आया।[22] अब सरकार ने स्थापित धर्मनिरपेक्ष मॉडल को बदलने की ओर इशारा करते हुए बहुत से खतरनाक संदेश की देना शुरू की।

गीज़ा विरोध एर्दोगन और उनकी पार्टी के शासन के लिए पहली बड़ी चुनौती के रूप में सामने आया। इस्तांबुल के गीज़ा पार्क इलाके में सरकार की विकास योजना के ख़िलाफ़ स्थानीय लोगों और पर्यावरणविदों के धरने के रूप में शुरू हुआ विरोध जल्द ही देशव्यापी विरोध में तब्दील हो गया।

एर्दोगन जल्द ही लोकतंत्र, स्वतंत्रता और मानवाधिकारों से संबंधित पिछली बहसों को खारिज करने लगे, और इसके बजाय उन पर सवाल उठाना शुरू कर दिया।[23] एकेपी के कैडर जो स्थानीय इस्लामो-राष्ट्रवादी राजनीति में विकसित किए गये थे, अब रूढ़िवादियों के टैग से इस्लामवाद में बदलाव के लिए दबाव बनाना शुरू कर दिये। जल्द ही एक उदारवादी और यूरोपीय समर्थक पार्टी के रूप में ए.के.पी. का टैग मिटना शुरू हो गया।[24] पुरानी राजनीति को करारा झटका सबसे पहले राष्ट्रीय राजनीतिक परिदृश्य से सेना के निष्कासन के रूप में आया। एर्दोगन के तहत, सेना की भूमिका में धीरे-धीरे क्षरण हुआ है और एकेपी का शानदार उदय सेना की लुप्त होती भूमिका के साथ हुआ।

अतीत में कई तख्तापलटों के माध्यम से, तुर्की सेना ने राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद (एन.एस.सी.) की पारंपरिक भूमिका को पार कर लिया था, और 1980 और 2002 में ए.के.पी. के आगमन के बीच, परिषद देश की सबसे शक्तिशाली संस्था बन गई थी। इसने असीमित शक्ति जमा कर ली थी और सुरक्षा के नाम पर नागरिक सरकार द्वारा लिए गए कई फैसलों को वीटो कर दिया था।[25] वर्ष 2011 में, सेना के खिलाफ कार्रवाई में, शीर्ष रैंक के कमांडरों और जनरल पर भ्रष्टाचार और देशद्रोह के विभिन्न आरोपों में मुकदमा चलाया गया था, और सैकड़ों को इसके भविष्य के बहिष्करण हेतु वातावरण तैयार करने के लिए जल्दी सेवानिवृत्ति लेने के लिए मजबूर किया गया था। जल्द ही सरकार ने एनएससी को एक नागरिक संस्थान में बदल दिया और सैन्य खर्च को नागरिक सरकार की निगरानी में लाया गया। विश्वविद्यालयों और मीडिया को सेना के नियंत्रण से मुक्त करने के लिए नए कानून बनाए गए।[26] सेना की भूमिका का उल्लेख करते हुए, एर्दोगन ने एक बार कहा था, "तुर्की द्वारा अपनी असीमित क्षमता हाशिल करने के लिए उसे पुराने विवादों को पहले हल करने की आवश्यकता है।"[27] अतीत में, तुर्की में राष्ट्रीय राजनीतिक पहचान का केंद्र बिंदु गणतंत्रवाद के प्रति वफादारी और सेना के प्रति सम्मान था, लेकिन एकेपी ने धीरे-धीरे राष्ट्रीय पहचान के इस अतीत के संकीर्ण ढांचे से खुद को दूर कर लिया।[28]

मई-जून 2013 में गीज़ा विरोध के प्रति सरकार की क्रूर प्रतिक्रिया सरकार की बदलती प्रकृति और असंतोष के लिए सिकुड़ती जगह को और उजागर करती है।[29] गीज़ा विरोध एर्दोगन और उनकी पार्टी के शासन के लिए पहली बड़ी चुनौती के रूप में सामने आया। इस्तांबुल के गीज़ा पार्क इलाके में सरकार की

विकास योजना के ख़िलाफ़ स्थानीय लोगों और पर्यावरणविदों के धरने के रूप में शुरू हुआ विरोध जल्द ही देशव्यापी विरोध में बदल गया।

अप्रैल 2017 में एक राष्ट्रीय जनमत संग्रह के माध्यम से, ,एकेपी ने सरकार के राष्ट्रपति स्वरूप की शुरुआत की, जो पहले से ही कमजोर हो रहे लोकतंत्र के लिए एक बड़ा झटका था। एर्दोगन का यह विचित्र कदम संसद की भूमिका को कम करने या प्रधानमंत्री के पद को खत्म करने के लिए कम था और असीमित शक्ति को एकत्र करने और तुर्की को एक-व्यक्ति शासन के तहत लाने के लिए अधिक था।

टिप्पणीकारों में से एक ने गीज़ा विरोध को गरिमा के विद्रोह के रूप में वर्णित किया।[30] यह धर्मनिरपेक्षतावादी शहरी लोगों के लिए एर्दोगन की बढ़ती अवमानना के विरोध में था। विरोध इस्लाम-राष्ट्रवादी को कड़ा संदेश दिया और एकेपी की सत्ता की स्वयंभू अजेयता को चुनौती दी। एर्दोगन ने अपने ही नागरिकों को पराया करके टकराव का रास्ता चुना। सरकार ने देश भर से हजारों युवाओं को गिरफ्तार किया जिसने लोगों और सरकार के बीच विभाजन को और गहरा कर दिया। एर्दोगन ने देश में बढ़ती अशांति के मद्देनजर अपने मूल समर्थकों को मजबूत करने के लिए राष्ट्रव्यापी अनेक रैलियों में अपने मतदाताओं का आह्वान किया।[31] अब तक एर्दोगन आलोचनाओं के प्रति असहिष्णु हो गए थे। एर्दोगन के एक समय के करीबी राजनीतिक सहयोगियों, जैसे उदारवादियों और वामपंथियों को असंतोष व्यक्त करने के लिए नहीं बख्शा गया और उन्हें विदेशी कठपुतली करार दिया गया।

तुर्की में अपने ही अतीत के खिलाफ मौजूदा दुश्मनी गीजा से आगे निकल गई है। अप्रैल 2017 में एक राष्ट्रीय जनमत संग्रह के माध्यम से, ए.के.पी. ने सरकार[32] के राष्ट्रपति स्वरूप की शुरुआत की, जो पहले से ही कमजोर हो रहे लोकतंत्र के लिए एक बड़ा झटका था। एर्दोगन का यह विचित्र कदम संसद की भूमिका को कम करने या प्रधानमंत्री के कार्यालय को खत्म करने के लिए कम और असीमित शक्ति को एकत्र करने और तुर्की को एक व्यक्ति के शासन में लाने के लिए अधिक था। एर्दोगन एक संकीर्ण अंतर से जनमत संग्रह जीतने में सक्षम हो पाए क्योंकि केवल 51% मतदाताओं ने जनमत संग्रह के लिए हाँ कहा और बाकी ने इसका विरोध किया।[33] बाद में एर्दोगन ने कहा, "हम जनमत संग्रह जीत गए चाहे परिणाम 1.0 हो या 5.0, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।"

जनमत संग्रह के परिणामस्वरूप, प्रधानमंत्री और कैबिनेट के कार्यालय को समाप्त कर दिया गया, जिससे राष्ट्रपति को अपने प्रशासन का चयन करने की सारी शक्ति मिल गई। उन्होंने संसद में सदस्यता के लिए आयु को घटाकर अठारह वर्ष कर दिया और संसद में सीटें बढ़ाईं,[34] शायद यह विचार कर कि उनके

साथ और अधिक वफादार जुड़ जाएंगे। उनकी ओर से, लोकतंत्र के प्रति उनकी गलतफहमी के बारे में पहले से ही कुछ संकेत थे जैसा कि उन्होंने एक बार कहा था, "लोकतंत्र एक सड़क की कार की तरह है। आप इसे तब तक चलाते हैं जब तक आप अपने गंतव्य पर नहीं पहुंच जाते, और फिर आप उतर जाते हैं।[35]

अपने शासन के दूसरे दशक में, एर्दोगन न केवल राजनीतिक संरचना के मूल सिद्धांत को बदलने पर आमादा थे, बल्कि वह अपने पुराने वफादार और पिछले राजनीतिक सहयोगियों के साथ जोखिम उठाना शुरू कर दिया। इस संबंध में सबसे बड़ा शिकार फतुल्लाह गुलेन और उनका आंदोलन था। अपनी धार्मिक-सामाजिक सक्रियता के चार दशकों में, गुलेनिस्ट आंदोलन एक शक्तिशाली इकाई के रूप में विकसित हुआ था और उसके समर्थकों का नेटवर्क तुर्की के राज्य संस्थानों में व्यापक तौर पर और गहराई तक प्रवेश कर गया था। एर्दोगन के उत्थान में गुलेनिस्टों की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका थी। ए.के.पी. द्वारा प्रतिपादित पिछले राजनीतिक और न्यायिक सुधारों को गुलेनवादियों का पूरा समर्थन प्राप्त था। गुलेनवादी बुद्धिजीवी उत्तरोत्तर एकेपी सरकार और मीडिया के संबद्ध विद्वान मंडली को राज्य के बुतपरस्ती के साथ सच्चे इस्लामवादी के रूप में संदर्भित करने के पक्षधर बन गये थे।[36]

लेकिन जल्द ही एर्दोगन और गुलेन दोनों ने राष्ट्रीय राजनीति को नियंत्रित करने की एक अलग महत्वाकांक्षा को आश्रय देना और प्रदर्शित करना शुरू कर दिया, जो धीरे-धीरे एक खुले राजनीतिक टकराव में बदल गया। यह सब सितंबर 2014 में शुरू हुआ जब गुलेनिस्ट एर्दोगन, उनके परिवार और साथियों से जुड़े भ्रष्टाचार के व्हिसल ब्लोअर के साथ आए।[37] एर्दोगन भ्रष्टाचार के आरोपों को गुलेनिस्टों द्वारा तख्तापलट का प्रयास करार दिया और कहा कि गुलेनिस्ट तुर्की की वैश्विक ताकतों के विरोधियों की कठपुतली के रूप में काम कर रहे हैं।[38] यह आरोप गुलेनवादियों को एर्दोगन के इस्लामवादी पंथ के बारे में बढ़ती आशंकाओं के बीच कुछ नैतिक दावा करने का एक मार्ग प्रदान कर दिया।[39]

बढ़ते वैचारिक और राजनीतिक संघर्ष अंततः एक खुले टकराव में समाप्त हो गए और वर्ष 2016 में तख्तापलट की कोशिश में, गुलेन समर्थित जनरलों पर तख्तापलट की साजिश रचने वालों का समर्थन करने का आरोप लगाया गया।[40] तख्तापलट की विफलता के बाद की कार्रवाई में, कई गुलेनवादियों को पुलिस, मीडिया,

> ए.के.पी. शासन के पहले दशक के दौरान, इसके कार्यक्रम और नीतियां अतातुर्क धर्मनिरपेक्षतावादी राजनीति के अनुरूप थीं, लेकिन वर्ष 2011 में 50% से अधिक वोटों के साथ चुनाव में ए.के.पी. की तीसरी बड़ी जीत के तुरंत बाद एक बड़ा बदलाव आया।

शैक्षणिक संस्थान और न्यायपालिका जैसे अधिकांश राज्य संस्थानों से बाहर कर दिया गया।[41] एर्दोगन ने न केवल तख्तापलट की साजिश रचने वालों का पीछा किया बल्कि गुलेनवादियों के खिलाफ कार्रवाई शुरू कर दी और गुलेनवादियों सहित अपने सभी राजनीतिक विरोधियों को दबाने के लिए आपातकालीन कानून का इस्तेमाल किया, जो उसके लिए अब राजनीतिक विरोधियों में तब्दील हो गए थे।

एकेपी शासन के पहले दशक के दौरान, इसके कार्यक्रम और नीतियां अतातुर्क धर्मनिरपेक्षतावादी राजनीति के अनुरूप थीं, लेकिन 50% से अधिक मतों के साथ चुनाव में एकेपी की तीसरी बड़ी जीत के तुरंत बाद वर्ष 2011 में एक बड़ा बदलाव आया। साहसिक इस्लामवादी शासन व्यवस्था का पहला संकेत राष्ट्रीय अनिवार्य शिक्षा प्रणाली में रातोंरात संशोधन था। सरकार ने लंबे समय से चली आ रही शिक्षा की दोहरी प्रणाली को खत्म करते हुए प्राथमिक शिक्षा में एक नया खंड पेश किया। प्राथमिक स्तर पर इस्लामी शिक्षा पर एक खंड जोड़ा गया था। इमाम हाटिप स्कूल (पहले मस्जिद के कर्मचारियों के लिए व्यावसायिक पाठ्यक्रम का एक केंद्र) को पुनर्जीवित किया गया जो पहले केवल हाई स्कूल से ऊपर के बच्चों के लिए खुले थे। सार्वजनिक और निजी दोनों स्कूलों में वैकल्पिक पाठ्यक्रमों की एक श्रृंखला शुरू की गई, जिससे अशांति पैदा हुई, विशेष रूप से अलेवी अल्पसंख्यकों के बीच जो पहले से ही अनिवार्य धार्मिक शिक्षा से छूट की मांग कर रहे थे।[42]

वर्ष 2011 के बाद के वर्षों में, सरकार के कामकाज में निरंकुश प्रवृत्ति अधिक दिखाई दे रही थी। राजनेताओं, जनरलों, न्यायाधीशों, मीडिया टाइकून और व्यापारियों जैसे देश के सभी प्रमुख व्यक्तियों के टेलीफोन टैपिंग की विभिन्न रिपोर्टें आ रहीं थीं।[43] उन जनरलों और राजनेताओं पर मुकदमा चलाने के लिए विशेष अदालतें गठित की गईं, जिन पर अतीत के तख्तापलट में सहयोगी होने का संदेह था।[44] यहां तक कि बाद के चुनावों का प्रबंधन राज्य संस्थानों द्वारा दृढ़ता पूर्वक किया गया था। चुनावों में विपक्षी प्रत्याशियों को निशाने पर लिया गया। विपक्षी दलों को मीडिया कवरेज से वंचित कर दिया गया था और, एक रिपोर्ट के अनुसार, तुर्की रेडियो और टीवी (टी.आर.टी.) ने, एक कथित राज्य स्वामित्व वाला मीडिया हाउस क्रमशः ए.के.पी. और एर्दोगन के लिए तीस और उनतीस घंटे आवंटित किया, जबकि किसी विपक्षी दल जैसे कि सी.एच.पी. के लिए पांच घंटे आवंटित किया।[45]

वर्ष 2014 में भ्रष्टाचार के खुलासे के बाद, सरकार इलेक्ट्रॉनिक संचार पर कड़े नियंत्रण के लिए नया कानून लाई। सोशल मीडिया पर सार्वजनिक असंतोष को सेंसर करने के प्रयास किए गए। वर्ष 2014 में, सरकार के आदेश के खिलाफ सीसी के एक फैसले को एर्दोगन ने एक गैर-देशभक्तिपूर्ण कार्य करार दिया।[46] पत्रकारों की अवैध हिरासत के खिलाफ वर्ष 2015 में इसी तरह के अदालती आदेश में एर्दोगन की निम्नलिखित टिप्पणी मिली, "मैं न तो आदेश का पालन करता हूं और न ही सम्मान करता हूं।"[47] वर्ष 2015 में, विश्व न्याय परियोजना के कानून का शासन के सूचकांक में तुर्की को वैश्विक स्तर पर चीन और रूस के बाद रैंक दिया गया।[48]

वर्ष 2014 में सीरिया में अमेरिका के नेतृत्व वाले आईएसआईएस विरोधी युद्ध ने कुर्द-तुर्की सरकार के संबंधों की गतिशीलता को और बदल दिया। वर्ष 2014 में आईएसआईएस द्वारा कोबानी-सीरिया में एक कुर्द क्षेत्र-की घेराबंदी और आईएसआईएस के खिलाफ तुर्की की निष्क्रियता के कारण तुर्की में कुर्द लोगों में असंतोष पैदा हुआ।

एर्दोगन के शासन काल में तहत पीकेके-तुर्की संबंध

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, वर्ष 1970 और वर्ष 1980 के दशक में तुर्की का राजनीतिक परिदृश्य बामपंथ और दक्षिणपंथ के बीच गहराई से विभाजित था, और इस राजनीतिक और वैचारिक अलगाववाद से एक नव-मार्क्सवादी कुर्द वर्कर्स पार्टी (पीकेके) का उदय हुआ, जिसका गठन वर्ष 1978 में छात्र आइकन अब्दुल्ला ओकलां द्वारा किया गया था।[49] इसका मुख्य उद्देश्य तुर्की के दक्षिण-पूर्व में अवस्थित कुर्द बहुल क्षेत्र में एक समाजवादी कुर्द राज्य की स्थापना करना था। इसके गठन के कुछ ही समय बाद, तुर्की ने वर्ष 1980 में अपना तीसरा तख्तापलट देखा और कुर्दों को इसका वास्तविक खामियाजा भुगतना पड़ा। उन पर राष्ट्रीय भावनाओं को कमजोर करने का आरोप लगाया गया, जबकि कुर्दों ने सरकार पर उनके सभी सांस्कृतिक और राजनीतिक अधिकारों से वंचित करने का आरोप लगाया।

फिर से यूरोपीय संघ की सदस्यता प्राप्त करने के प्रयास में, ए.के.पी. सरकार ने वर्ष 2002 में सांस्कृतिक और शैक्षिक स्वतंत्रता सहित कुर्दों के लिए एक व्यापक कल्याण पैकेज की घोषणा की, जो उनकी प्रमुख मांगों में से एक थी।[50] ए.के.पी. ने वर्ष 2004 में "कुर्द ओपनिंग" नामक एक कार्यक्रम शुरू किया और वर्ष 2009 में फिर से, उन्हें सांस्कृतिक और भाषाई अधिकार प्रदान किया।[51] एर्दोगन सरकार द्वारा उठाए गए प्रमुख कदमों में से एक वर्ष 2009 में "कुर्द ओपनिंग प्लान" के तहत चौंतीस पीकेके कैडरों की रिहाई थी,[52] लेकिन जल्द ही यह मुश्किल में पड़ गया और संबंध फिर से तनावपूर्ण बन गया। अरब विद्रोह के बीच बढ़ती सीरिया-तुर्की दुश्मनी कुर्दों और तुर्की सरकार के बीच चल रही दुश्मनी का एक महत्वपूर्ण कारक रही है।

वर्ष 2014 में सीरिया में अमेरिकी नेतृत्व वाले आईएसआईएस विरोधी युद्ध ने कुर्द-तुर्की सरकार के संबंधों की गतिशीलता को और बदल दिया। वर्ष 2014 में आईएसआईएस द्वारा कोबानी-सीरिया में एक कुर्द क्षेत्र-की घेराबंदी और आईएसआईएस के खिलाफ तुर्की की निष्क्रियता ने तुर्की में कुर्दों के बीच असंतोष पैदा किया और जल्द ही तुर्की के कुर्द बहुल दक्षिण-पूर्वी हिस्से में दंगे की एक श्रृंखला शुरू हो गई जो बाद में आसपास के क्षेत्रों में फैल गयी।

आईएसआईएस के खिलाफ सरकार की निष्क्रियता को कुर्दों ने आईएसआईएस द्वारा पीकेके की हार में मदद करने के प्रयास के रूप में देखा, जो भविष्य में सरकार के साथ किसी भी बातचीत के लिए पूर्व के शक्ति संबंध को फिर से संतुलित करेगा। कोबानी के बाद के चरण के पश्चात तुर्की में घेराबंदी, गिरफ्तारी, हवाई हमले, कर्फ्यू, आतंकवादी हमले, सड़क के किनारे विस्फोट और हत्याओं का एक लंबा दौर चला, और सबसे खराब सितंबर 2015 में अंकारा बम विस्फोट के रूप में सामने आया जिसमें 102 नागरिक मारे गए।[53] वर्ष 2015-2016 की हिंसा और उसके बाद सीरिया में कुर्द संगठनों के खिलाफ तुर्की के सैन्य अभियान ने पीकेके और तुर्की सरकार के बीच नवजात शांति प्रक्रिया को पटरी से उतार दिया, जिससे संघर्ष के लंबा होने का खतरा पैदा हो गया।

वर्ष 2016 तख्तापलट की कोशिश और एर्दोगन का पुनर्जन्म

तुर्की के लिए बहुसंख्यकवाद की राजनीति की ओर आगे बढ़ने का मार्ग जुलाई 2016 में विफल तख्तापलट था, जिसने न केवल आसान किया बल्कि राष्ट्रीय राजनीतिक पटल पर एर्दोगन के नियंत्रण को बढ़ाने और गहरा करने की प्रक्रिया को तेज कर दिया। एर्दोगन द्वारा खुद को एक निर्विवाद शासक के रूप में स्थापित करने के पिछले सभी प्रयासों को अपराधियों का सामना करने की आड़ में और तेज कर दिया गया था। उस समय की सरकार ने तख्तापलट के प्रयास के लिए गुलेनिस्ट गुटों और विपक्षी ताकतों को सीधे तौर पर दोषी ठहराया, जिसने देश पर शासन करने के लिए एर्दोगन को खुली छूट दे दी। एर्दोगन की तख्तापलट के बाद की राजनीति ने एक नए मंत्र के साथ एक नए नारे का चित्रण करके देश के राजनीतिक क्षेत्रों में एक बाइनरी का सृजन कर दिया, "यदि आप सरकार के साथ नहीं हैं, तो आप अपराधियों के साथ हैं और इसलिए एक राष्ट्र-विरोधी हैं।"

षड्यंत्रकारियों को खोजने के लिए एक व्यवस्थित अभियान शुरू किया गया था, और हजारों मीडियाकर्मियों, विश्वविद्यालय और कॉलेज के शिक्षकों, विपक्ष के राजनेताओं और सशस्त्र कर्मियों को एकेपी के प्रति वफादार नहीं होने के नाम पर या तो उन्हें निकाल दिया गया या जेल में डाल दिया गया। एक अवसर पर एर्दोगन ने आतंकवाद की परिभाषा व्यापक करने का आह्वान किया और कहा, "हथियार या बम रखने वाले आतंकवादी और कलम या उपाधि का उपयोग करने वाले या आतंकवादियों को अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए आदेश देने वालों में कोई अंतर नहीं है।"[55] साजिशकर्ताओं को पकड़ने के नाम पर की गई कार्रवाई ने लोकतांत्रिक मानदंडों, विवेकपूर्ण ट्रायल या राजनीतिक जवाबदेही के सभी तर्कों को खारिज कर दिया। पत्रकारों, शिक्षाविदों और नागरिक स्वतंत्रता के पैरोकार गैर सरकारी संगठनों जैसे नागरिक समाज के अग्रदूतों को आज तक निशाना बनाया जा रहा है।[56]

तुर्की के लिए बहुसंख्यकवाद की राजनीति की ओर आगे बढ़ने का मार्ग जुलाई 2016 में विफल तख्तापलट था, जिसने राष्ट्रीय राजनीतिक पटल पर एर्दोगन के नियंत्रण को बढ़ाने और गहरा करने की प्रक्रिया को न केवल आसान किया बल्कि उसे तेज कर दिया।

एकेपी के शासन में तुर्की की अर्थव्यवस्था अपने हाल के इतिहास में किसी अन्य समय की अर्थव्यवस्था की तुलना में बेहतर स्थिति में रही है। एर्दोगन के शासन के पहले दशक में सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि में पर्याप्त वृद्धि हुई थी और वर्ष 2011 में, सकल घरेलू उत्पाद में 11.1% की वृद्धि हुई और मुद्रास्फीति की दर वर्ष 2009 में घटकर 6.3% हो गई जो कि वर्ष 2002 में 29.6% थी। एर्दोगन के शासन के पहले 12 वर्षों के दौरान वर्ष 2014 में सकल घरेलू उत्पाद तीन गुना बढ़कर 798.429 अमेरिकी डॉलर हो गया।

तुर्की की अर्थव्यवस्था का उत्थान और पतन

एर्दोगन के शासन के पहले दशक में, आर्थिक प्रगति और लोकतांत्रिक राजनीति को अपनाना ऐतिहासिक उपलब्धियां थीं। यूरोपीय संघ (ईयू) की पूर्ण सदस्यता प्राप्त करने के तीव्र इच्छा से एक बार फिर नई आर्थिक नीतियों को अपनाने और एक खुली अर्थव्यवस्था के अभियान को बढ़ावा मिला। यूरोपीय संघ में प्रवेश के लिए यूरोपीय संघ के विभिन्न अनिवार्यताओं जैसे निर्यातोन्मुख आर्थिक मॉडल को बढ़ावा देना और विदेशी प्रत्यक्ष निवेश में वृद्धि के साथ सामंजस्य स्थापित करने के लिए पर्याप्त सुधार की आवश्यकता थी। ए.के.पी. ने एक ऐसी आर्थिक नीति अपनाई जिससे वंचितों और ग्रामीण गरीबों को अधिक प्रत्यक्ष लाभ हुआ। वर्ष 2013 के एक अध्ययन में अनुमान लगाया गया था कि ए.के.पी. की लोकप्रियता और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि के बीच एक मजबूत संबंध था।[57]

एकेपी के शासन में तुर्की की अर्थव्यवस्था अपने हाल के इतिहास में किसी अन्य समय की अर्थव्यवस्था की तुलना में बेहतर स्थिति में रही है। एर्दोगन के शासन के पहले दशक में सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि में पर्याप्त वृद्धि हुई थी और वर्ष 2011 में, सकल घरेलू उत्पाद में 11.1% की वृद्धि हुई और मुद्रास्फीति की दर वर्ष 2009 में घटकर 6.3% हो गई जो कि 2002 में 29.6% थी।[58] एर्दोगन के शासन के पहले बारह वर्षों के दौरान, वर्ष 2014 में तुर्की की जीडीपी तीन गुना बढ़कर 798.429 अमेरिकी डॉलर हो गई।[59] राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था मात्र वर्ष 2005 में ही इतनी स्थिर हो गई थी कि तुर्की ने

अपनी राष्ट्रीय मुद्रा से छह शून्य हटा दिए उसी समय देश में नई लीरा प्रचलन में लायी गयी। तुर्की के आर्थिक विकास के सुनहरे दिनों में तुर्की के सबसे फलते-फूलते क्षेत्र रियल एस्टेट और निर्माण थे, और इन क्षेत्रों ने यूरोप, लैटिन अमेरिका और अफ्रीका के बाजारों को प्रभावित किया।

हाल के दिनों में तुर्की को गंभीर आर्थिक मंदी का सामना करना पड़ा है, और अधिकांश उदारीकरण और उद्यमशीलता की स्वतंत्रता छिन्न-भिन्न हो गई है।

स्वास्थ्य क्षेत्रों, परिवहन और सार्वजनिक सेवाओं में तेजी से सुधार समग्र आर्थिक समृद्धि का परिणाम था। फिर से, इन आर्थिक उपलब्धियों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा यूरोपीय संघ की सदस्यता हासिल करने की प्रक्रिया को तेज करने के लिए यूरोपीय संघ के दिशानिर्देशों के अनुसमर्थन में बड़े पैमाने पर संरचनात्मक सुधारों के लिए था। वर्ष 2005 में, तुर्की के कुल विदेशी निवेश में ईयू-25 का विदेशी प्रत्यक्ष निवेश में 38% हिस्सा था।[60]

राजनीतिक और लोकतांत्रिक ग्राफ की तरह, देश का आर्थिक ग्राफ भी विशेष रूप से वर्ष 2015 के बाद से गिरना शुरू हो गया। हाल के दिनों में तुर्की को गंभीर आर्थिक मंदी का सामना करना पड़ा है, और अधिकांश उदारीकरण और उद्यमशीलता की स्वतंत्रता छिन्न-भिन्न हो गई है। वर्ष 2015 और वर्ष 2020 के बीच बेरोजगारी दर 10.3% से बढ़कर 13.7% और मुद्रास्फीति की दर 7.7% से बढ़कर 12.6% हो गई है।[61] वर्ष 2018 में, तुर्की की लीरा ने अमेरिकी डॉलर के मुकाबले अपने मूल्य का 30% खो दिया था। वर्ष 2019 में, तुर्की वर्ष 2007 के स्तर से नीचे गिर गया जब प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय वर्ष 2013 में 12,480 अमेरिकी डॉलर तक बढ़ गई थी, लेकिन वर्ष 2019 में फिर से घटकर 9,117 अमेरिकी डॉलर हो गई, जो वर्ष 2007 के स्तर से ज्यादा भिन्न नहीं है।[62]

इन वर्षों में, सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों और उद्यमियों के भीतर ए.के.पी. का समर्थन आधार कम हो गया, और तख्तापलट के प्रयास के बाद, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को काफी नुकसान हुआ है और भ्रष्टाचार की जड़े और गहरी हो गयी हैं। वर्ष 2019 में, ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल द्वारा तुर्की को 180 देशों में 91वां स्थान दिया गया था।[63] स्वतंत्रता और अवसर की तलाश में, प्रतिभा पलायन का एक नया चरण औद्योगिक विकास की प्रगति को प्रभावित करता देखा गया। राजनीतिक तनाव, अनिश्चितता और बढ़ती लालफीताशाही से बचने के लिए कई औद्योगिक इकाइयां कथित तौर पर अपने विनिर्माण और अनुसंधान एवं विकास को आउटसोर्स करने का विकल्प चुन रही हैं। उपरोक्त कारणों से कई बाहरी देशों ने कथित तौर पर देश में अपना संचालन बंद कर दिया।[64]

सीरियाई गृहयुद्ध और 2.7 मिलियन शरणार्थियों की आमद ने तुर्की की अर्थव्यवस्था को और अधिक परेशानी में डाल दिया, जिससे बेरोजगारी में अचानक वृद्धि हुई।[65] वर्ष 2019 के स्थानीय चुनावों में, ए.के.पी. सभी प्रमुख शहरों[66] में पराजित हो गया, जिससे एर्दोगन की भविष्य की राजनीतिक संभावनाएँ भी प्रभावित हो सकती हैं।

तुर्की और दुनिया

एकेपी की कई भविष्यवाणियों और घरेलू वादों की तरह, आगामी वर्षों में तुर्की की विदेश नीति भी डगमगाने लगी। तुर्की की विदेश नीति के दो दशकों में पहला शिकार "पड़ोसियों के साथ शून्य समस्या" का प्रशंसित दर्शन था, जो जल्द ही "केवल समस्या" में बदल गया।[67] इसके अलावा, 'रणनीतिक गहराई'[68] का इसका सिद्धांत तुर्की के विदेश नीति मॉडल पर कोई महत्वपूर्ण छाप छोड़ने में विफल रहा।

एकेपी के शासन (2002-2011) के पहले दशक के दौरान, अरब दुनिया तुर्की की विदेश नीति की केंद्र बिंदु थी, और वह अरब दुनिया के अपने पड़ोसियों को कतिपय सफलता के साथ अपनाने में सक्षम था। लेकिन वर्ष 2011 में अरब विद्रोह के फैलने और उसके बाद तुर्की की महात्वाकांक्षी नीति के परिणाम स्वरूप, इस रिश्ते में बढ़ती गर्माहट समाप्त हो गई।

सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात, बहरीन और मिस्र द्वारा जून 2017 की नाकाबंदी के दौरान कतर को तुर्की का समर्थन मध्यस्थता और बातचीत की अपनी पिछली नीतियों से एकदम अलग था।

एकेपी के शासन (2002-2011) के पहले दशक के दौरान, अरब दुनिया तुर्की की विदेश नीति की केंद्र बिंदु थी, और वह अरब दुनिया के अपने पड़ोसियों को कतिपय सफलता के साथ अपनाने में सक्षम था। लेकिन वर्ष 2011 में अरब विद्रोह के फैलने और उसके बाद तुर्की की महात्वाकांक्षी नीति के परिणाम स्वरूप, इस रिश्ते में बढ़ती गर्माहट समाप्त हो गई। जल्द ही इसकी गलत धारणा और कूटनीतिक त्रुटियों से भरा इसका रणनीतिक व्यवहार इसे लगभग अलगाव के कगार पर पहुँचा दिया।[69]

अरब विद्रोह के बीच, अरब विद्रोह के बाद की अरब राजनीति के लिए खुद को एक रोल मॉडल के रूप में पेश करने के प्रयास में क्रांति की सराहना करने वाला तुर्की क्षेत्र का पहला देश था। क्रांति के लिए तुर्की के समर्थन से इसके इस्लामवादी उन्मुखीकरण स्पष्ट रूप से संसूचित हुआ।[70] तुर्की ने पहले राष्ट्रपति मुबारक और राष्ट्रपति असद को अपने पद छोड़ने के लिए कहा और बाद में मिस्र और सीरिया में क्रमशः मुस्लिम ब्रदरहुड (एमबीएच) और विद्रोही बलों जैसी सरकार विरोधी ताकतों का समर्थन किया।

एम.बी.एच. को इसके समर्थन से गठबंधन के बीच एक वैचारिक टकराव उत्पन्न हुआ, जिसमें एक तरफ एम.बी.एच. विरोधी यूएई, सऊदी अरब और मिस्र का गठबंधन और दूसरी तरफ तुर्की था।[71]

इसके अलावा जून 2017 में सऊदी अरब, यूएई, बहरीन और मिस्र द्वारा क़तर की नाकेबंदी के दौरान तुर्की का समर्थन मध्यस्थता और बातचीत की अपनी पिछली नीतियों से एकदम अलग था। जल्द ही नवंबर 2018 में इस्तांबुल में सऊदी वाणिज्य दूतावास में एक असंतुष्ट सऊदी स्तंभकार, जमाल खशोगी की हत्या ने तुर्की और सऊदी अरब के बीच एक और टकराव को जन्म दिया। वर्ष 2019 में लीबिया में तुर्की की रणनीतिक और सैन्य भागीदारी और तत्पश्चात् राष्ट्रीय एकता की संयुक्त राष्ट्र की मान्यता प्राप्त सरकार के बीच समुद्री समझौते[72] ने न केवल अरब दुनिया के साथ संबंधों को बर्बाद कर दिया बल्कि दरार को एक प्रमुख वैचारिक संघर्ष में बदल दिया जिसने तुर्की को सऊदी अरब और संयुक्त अरब अमीरात के साथ मिस्र का सबसे बड़ा रणनीतिक और वैचारिक दुश्मन में तब्दील कर दिया। तुर्की-अरब संबंध उस स्तर तक गिर गए जब मिस्र के राष्ट्रपति अल-सिसी ने एक बयान में कहा, "तुर्की को एक गैर-अरब देश होने के नाते अरब मामलों में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है।"73 कई लोग आज भी इसके रणनीतिक प्रस्ताव को पुराने "ओटोमन साम्राज्य" के चिह्न के रूप में देखते हैं।[74]

एर्दोगन शासन के दौरान, इजरायल-तुर्की संबंध भी मुश्किल में पड़ गए क्योंकि तुर्की ने अक्सर इस्राइल पर इस क्षेत्र में कुर्द पुनरुत्थान का समर्थन करने का आरोप लगाया, जबकि इजरायल ने हमास को इस प्रस्ताव के लिए तुर्की की आलोचना की। इस्राइल ने एक बार कहा था कि तुर्की का मौजूदा प्रस्ताव और कुछ नहीं बल्कि उसकी नई विचारधारा से प्रेरित नीति का प्रतिबिंब है।[75]

इन वर्षों में, तुर्की के संबंध ग्रीस, आर्मेनिया और यूरोपीय संघ के अन्य प्रमुख देशों जैसे फ्रांस, जर्मनी के साथ खराब हो गए। तुर्की ने एक तरफ अमेरिका और पश्चिमी यूरोप और दूसरी तरफ रूस के बीच एक अनिश्चित और लड़खड़ाती विदेश नीति की दिशा अपनाई। अतीत में, वर्ष 2008 में दक्षिण ओसेशिया संकट के दौरान तुर्की के रूस के साथ गहरे मतभेद थे और 2014 में तुर्की के हवाई क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए तुर्की के रूसी लड़ाकू विमानों में से एक को गिराए जाने के बाद 2014 में सीरियाई संघर्ष जब चरम पर था तो उस दौरान दोनों लगभग युद्ध के कगार पर थे।[76] वर्ष 2020 में, तुर्की ने नाटकीय रूप से पूर्वी भूमध्य सागर के संबंध में अपने "ब्लू होम डॉक्ट्रिन" का दावा करके ग्रीस के साथ तनाव को बढ़ा दिया। एर्दोगन ब्लू वाटर नीति में यूरोपीय संघ में किसी भी बड़े देश का समर्थन प्राप्त करने में विफल रहा, और तुर्की के वर्ष 2019 के लीबिया सौदे की भी यूरोपीय संघ के अधिकांश देशों द्वारा निंदा की गई।

इसी तरह, तुर्की और साइप्रस गणराज्य के संबंध एर्दोगन के शासन के दौरान खराब हो गए थे, जब तुर्की ने प्राकृतिक गैस के लिए साइप्रस के विशेष आर्थिक क्षेत्र (ईईजेड) में ड्रिलिंग शुरू कर दी थी। सितंबर

2020 में अर्मेनिया के खिलाफ अपने युद्ध में अज़रबैजान के लिए तुर्की की सैन्य और राजनयिक समर्थन इसकी "पड़ोसियों के साथ शून्य समस्या" नीति के पूर्ण अवहेलना का एक और सबूत था। तुर्की की सरकार और यूरोपीय शक्तियों के बीच आगे जो दरार पैदा हुई उसका कारण जुलाई 2020 में हागिया सोफिया-लंबे समय तक तुर्की की महानगरीयता का प्रतीक-संग्रहालय से मस्जिद तक की स्थिति को रद्द करने का राष्ट्रपति एर्दोगन का निर्णय था। यह उच्चतम प्रशासनिक अदालत द्वारा हागिया सोफिया को संग्रहालय में बदलने के 1934 के कैबिनेट के फैसले को रद्द करने के बाद किया गया था।[77] इस फैसले के खिलाफ वैश्विक हंगामा हुआ और ग्रीस ने कहा कि यह उसके विश्वव्यापी चरित्र का अपमान है। यूरोपीय संघ के उच्च निंदनीय नेताओं ने भी इस फैसले की निंदा की।

दिसंबर 1999 में हेलसिंकी यूरोपीय परिषद की बैठक के बाद तुर्की का यूरोपीय संघ में प्रवेश देश के राजनीतिक हलकों में एक प्रमुख मुद्दा रहा है क्योंकि तुर्की को इसकी सदस्यता के लिए उम्मीदवार घोषित किया गया था।[78] जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है एर्दोगन के शासन के प्रारंभिक वर्षों में, प्रतिपादित अधिकांश राजनीतिक, आर्थिक या कानूनी सुधारों को मुख्य रूप से यूरोपीय संघ तक पहुँचने के उद्देश्य से यूरोपीय संघ के चार्टर का अनुपालन करने के लिए किया गया था। फरवरी 2002 और जुलाई 2004 के बीच, तुर्की की संसद कोपेनहेगन राजनीतिक मानदंडों के अनुसार मानवाधिकारों, लोकतंत्र और कानून के शासन जैसे मुद्दों पर यूरोपीय संघ के नियामक ढांचे को समायोजित करने के लिए आठ विधायी पैकेजों को अपनाया।[79]

वर्ष 2005 में पहली बार, तुर्की के तत्कालीन विदेश मंत्री अब्दुल्ला गुल ने तुर्की जनता को यह खबर दी थी कि, "हम एक समझौते पर पहुंच गए हैं और तुर्की यूरोपीय संघ में एकमात्र मुस्लिम देश होगा।"[80] लेकिन जल्द ही यूरोपीय संघ और तुर्की दोनों अलग हो गये और वर्ष 2006 में साइप्रस गणराज्य, जो पहले से ही यूरोपीय संघ का सदस्य है, के लिए अपने बंदरगाहों और हवाई क्षेत्रों[81] को खोलने से तुर्की के इनकार करने के बाद वार्ता निलंबित रही। बाद के वर्षों में, यूरोपीय संघ ने पैंतीस यूरोपीय संघ के अध्यायों में से आठ अध्यायों को रोक दिया और बाद में साइप्रस गणराज्य ने अन्य छह अध्यायों को होल्ड पर रखा, जो फिलिप गॉर्डन के शब्दों में, "इसने अंकारा को विश्वासघात की भावना के साथ छोड़ दिया।"[82]

निष्कर्ष

पूर्ववर्ती अनुच्छेदों में की गई टिप्पणियों से पता चलता है कि तुर्की गणराज्य ने एकेपी के शासन के दो दशकों के दौरान खुद को कैसे बदल दिया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि ए.के.पी. के शासन के पहले दशक ने देश के लिए एक नई लोकतांत्रिक शुरुआत और अभूतपूर्व आर्थिक विकास की शुरुआत की थी। ए.के.पी. के लोकतांत्रिक रवैये के कारण, राजनीतिक असंतोष की अभिव्यक्ति के लिए नई जगह बनाई जा सकी और न्यायपालिका और मीडिया-एक सभ्य समाज के अग्रदूत-जैसी संस्थाएँ खुद को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करने में सक्षम हुईं। तुर्की के मानवाधिकारों के रिकॉर्ड में सुधार और आलोचना के प्रति सहिष्णुता की पश्चिमी शक्तियों द्वारा भी सराहना की गई थी और वे शासन के पश्चिमी मॉडल के करीब पहुंचने की कोशिश के क्रम में तुर्की की नई राजनीति को अपनाने की सराहना कर रहे थे। एक बात जो प्रमुखता के साथ आश्चर्य के रूप में उभर कर सामने आयी वह एकेपी के तहत नई राजनीति का उदय थी जो इस्लामवादी राजनीति के आदर्शों द्वारा महत्वपूर्ण रूप से संसूचित किया गया था जो अन्य अरब देशों में सफल होने में विफल रहा था।

लेकिन एकेपी की उदारवादी राजनीति से विकसित हुई नई लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था की जगह राजनीति के नए सेट ने ले ली, जिसमें राजनीतिक असंतोषों के लिए जगह कम हो गई थी और वह ऊपर वर्णित नए राजनीतिक ढांचे को खड़ा करने में तुला हुआ था। तुर्की की राजनीति हर मायने में बहुसंख्यकवादी में तब्दील हो गई जहां लोगों के पास बहुत ही संकीर्ण राजनीतिक विकल्प रह गए। इसके अलावा संवैधानिक रूप से प्रतिष्ठापित राष्ट्रपति शासन व्यवस्था की स्थापना से देश में लोकतांत्रिक राजनीति के लिए राजनीतिक स्थान को कम कर दिया और इस प्रणाली के एक व्यक्ति के शासन में विकसित होने की संभावना बढ़ गई है। इसके अलावा तुर्की इस साल जून में राष्ट्रव्यापी चुनाव कराने के लिए तैयार है जब मतदाता राष्ट्रपति के साथ-साथ छह सौ संसद सदस्यों को चुनेंगे। यह चुनाव केवल राष्ट्रपति एर्दोगन के लिए ही नहीं बल्कि पूरी राष्ट्रीय राजनीति के लिए एक कड़ी परीक्षा अर्थात् लिटमस टेस्ट होगी क्योंकि ए.के.पी. के शासन में पिछले दो दशकों के दौरान तुर्की में बहुत कुछ बदल गया है। इसके अलावा, संसदीय प्रणाली का राष्ट्रपति प्रणाली में परिवर्तन, राष्ट्रपति को अधिक शक्ति प्रदान करने वाले नए कानूनों की एक श्रृंखला और जुलाई 2016 के तख्तापलट के प्रयास ने तुर्की में एक नई तरह की बायनरी राजनीति का निर्माण किया है जहां विपक्षी ताकतों के लिए जगह संकीर्ण होने लगता है।

डॉ. फज्जुर रहमान सिद्दीकी भारतीय वैश्विक परिषद (सप्रू हाउस) में सीनियर रिसर्च फेलो हैं। उन्होंने जेएनयू के स्कूल ऑफ इंटरनेशनल स्टडीज से वेस्ट एशियन स्टडीज में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। वह तीन पुस्तकों के लेखक हैं: राजनीतिक इस्लाम और अरब विद्रोह: बदलते समय में इस्लामवादी राजनीति, संक्रमण में अरब दुनिया और एक नए क्षेत्रीय व्यवस्था की खोज और इस्लामी राज्य की अवधारणा: खलीफा के समय से बीसवीं शताब्दी तक।

भारतीय वैश्विक परिषद

सप्रू हाउस, नई दिल्ली

पाद-टिप्पणियाँ

[1]साइमन ए. वाल्डमैन और एम्रे कालसिकन, द न्यू तुर्किए एंड इट्स डिसकंटेंट्स (लंदन: हर्स्ट एंड कंपनी, 2016), पृ.सं. 15
[2]बार बेसर और अहमत एर्डी ओज़टर्क (संपा.), ऑथरिटेरियन पॉलिटिक्स इन तुर्किए: इलेक्शन, रेजिस्टेंस एंड द एकेपी (लंदन: आई.बी. टॉरिस, 2017), पृ.सं. 20
[3]बार और अहमत, पृ.सं. 01
[4]नॉर्मन ए. गहम, फोक लिंडाहल और तैमूर कोकोग्लू (एड.), मेकिंग रशिया एंड तुर्किए ग्रेट अगेन: पुतिन एंड एर्दोगन इन सर्च ऑफ लॉस्ट एम्पायर्स एंड ऑटोक्रेटिक पावर (यूके: पाउडरमैन एंड लिटिलफील्ड पब्लिशिंग ग्रुप, 2021) पृ.सं. 126
[5]नॉर्मन, फोक एंड तैमूर, पृष्ठ सं. 148
[6]अहमद एल अमरौई और फैसल एड्रोस, व्हाई तुर्किए मिलिट्री इज नॉट दैट यूज्ड इट बी, अलजजीरा इंग्लिश, 5 जून, 2018, https://bit.ly/3li0vlE 23 दिसंबर, 2022 को एक्सेस किया गया
[7]साइमन और एम्रे, द न्यू तुर्किए एंड इट्स डिसकंटेंट्स, पृष्ठ सं 61
[8]साइमन और एम्रे, द न्यू तुर्किए एंड इट्स डिसकंटेंट्स, पृष्ठ सं 61
[9]साइमन और एम्रे, द न्यू तुर्किए एंड इट्स डिसकंटेंट्स, पृष्ठ सं. 51
[10]साइमन और एम्रे, पृष्ठ सं 27
[11]साइमन और एम्रे, पृ.सं. 13
[12]नॉर्मन, फोक एंड तैमूर, पृ.सं. 158
[13]साइमन ए और एम्रे, पृ.सं. 60
[14]नॉर्मन ए. गहम, लोक लिंडाल और तैमूर कोकोग्लू, पृ.सं. 161
[15]एरिक ज़ुर्चर, तुर्की: ए मॉडर्न हिस्ट्री (न्यूयॉर्क: आईबी टॉरिस, 1993) पृ.सं. 338
[16] नॉर्मन, फोक एंड तैमूर, पृ.सं. 153
[17]साइमन ए वाल्डमैन और एमरे कालसिकन, पृष्ठ सं. 68
[18]मेकाटी प्लॉट, पृष्ठ सं. 313
[19]साइमन ए वाल्डमैन और एमरे कालसिकन, पृष्ठ सं. 68
[20]नेकाटी पोलाट, राइम चेंज इन कंटेंपोरेरी टर्किये: पॉलिटिक्स, राइट्स, मिमेसिस (एडिनबर्ग यूनिवर्सिटी प्रेस: एडिनबर्ग, 2016) पृष्ठ सं. 115
[21]नेकाती पोलाट, पृष्ठ सं. 85
[22]नेकती पोलाट, पृष्ठ सं. 141
[23]नेकाती पोलाट, पृ. सं. 178
[24]नेकाटी पोलाट, पृ. सं. 147
[25]साइमन और एम्रे, पृ. सं. 19
[26]अहमद एल अमरौई और फैसल एड्रोस, व्हाई तुर्किए मिलिट्री इज नॉट दैट यूज्ड इट बी, अलजजीरा इंग्लिश, 5 जून, 2018, https://bit.ly/3li0vlE 23 दिसंबर, 2022 को एक्सेस किया गया
[27]साइमन और एम्रे, पृ. सं. 229
[28]नेकाती पोलाट, पृ. सं. 76
[29]नेकाटी पोलाट, पृ. सं. 188
[30]नेकाती पोलाट, पृ. सं. 195
[31]नेकाती पोलाट, पृ. सं. 177
[32]नॉर्मन, फोक एंड तैमूर, पृ. सं. 155
[33]नॉर्मन, फोक और तैमूर पृ. सं. 155
[34]नॉर्मन, लोक और तैमूर, पृ. सं. 158
[35]ज़ियोन बेरेन, टॉर्न कंट्री: तुर्की बिटवीन सेक्युलरिज्म एंड इस्लामिज्म (हूवर इंस्टीट्यूशन प्रेस: सैंडफोर्ड यूनिवर्सिटी, 2010), पृ. सं. 45
[36]नेकाती पोलाट, पृ. सं. 160

[37]नेकाटी पोलाट, पृ. सं. 94

[38]नेकाती पोलाट, पृ. सं. 237

[39]नेकाती पोलाट, पृ. सं. 240

[40]सोनर कैगाप्टे, न्यू सुल्तान: एर्दोगन एंड क्राइसिस ऑफ़ मॉडर्न तुर्कीये (लंदन: आई.बी. टॉरिस, 2017), पृ. सं. XVIII

[41]साइमन और एम्रे, पी। 44

[42]नेकाती पोलाट, पृष्ठ 145

[43]नेकाती पोलाट, पृ. 98

[44]नेकाटी पोलाट, पृ. 103

[45]नेकाटी पोलाट, पृ. 232

[46]नेकाटी पोलाट, पृष्ठ. 165

[47]नेकाती पोलाट, पृष्ठ. 166

[48]नेकाटी पोलाट, पृ. 142

[49]एरिक ज़ुचर, पी। 202

[50]साइमन और एम्रे, पृ. सं. 176

[51]बार, पृ. सं. 32

[52]साइमन और एम्रे, पी। 185

[53]साइमन और एम्रे कालसिकन, पृ.सं. 193

[54]नॉर्मन, लोक एल और तैमूर पृ.सं. 157

[55]बहार और अहमत, पृ.सं. 225

[56]बहार और अहमत, पृ.सं. 214

[57]साइमन और एम्रे, पृ.सं. 68

[58]साइमन और एम्रे, पृ.सं. 68

[59]मेकाटी प्लॉट, पृ.सं. 313

[60]साइमन और एमरे पृ.सं.199

[61]नॉर्मन फोक एंड तैमूर, पृ.सं. 170

[62]नॉर्मन, फोक एंड तैमूर, पृ.सं. 174

[63]नॉर्मन ए. गहम, लोक लिंडाहल और तैमूर कोकोग्लू, पृ.सं.173

[64]पीटर एस. गुडमैन, टर्कीज लॉन्ग, पेनफुल इकोनॉमिक क्राइसिस ग्राइंड्स ऑन, द न्यूयॉर्क टाइम्स, 8 जुलाई, 2019, एक्सेस किया गया https://nyti। ms/3W21cnk दिनांक 10 दिसंबर, 2022

[65]साइमन ए वाल्डमैन और एम्रे कालसिकन, पृ.सं.70

[66]गोलुन तोल, तुर्की का एंडगेम इन सीरिया, विदेश मामले, 19 अक्तूबर, 2019

[67]नॉर्मन, पृ.सं. 175

[68]यह तुर्की के पूर्व प्रधानमंत्री, प्रो दावुतोग्लू द्वारा प्रतिपादित रणनीतिक दर्शन है जो तुर्की को पश्चिमी और इस्लामी सभ्यताओं के बीच एक पुल के रूप में संदर्भित करता है।

[69]साइमन, पृ.सं. 197

[70]कतेरीना डालकौरा, टर्किस फॉरेन पॉलिसी इन मिडिल ईस्ट: पॉवर प्रोजेक्शन एंड पोस्ट-आईडियोलॉजिकल पॉलिटिक्स, इंटरनेशनल अफेयर्स, वॉल्यूम। 97, अंक 4, जुलाई 2021, पीपी. 1125-1142

[71]कतेरीना डालकौरा, टर्किस फॉरेन पॉलिसी इन मिडिल ईस्ट: पॉवर प्रोजेक्शन एंड पोस्ट-आईडियोलॉजिकल पॉलिटिक्स

[72]तुर्की साइन्स मैरीटाइम डील विद लीबिया, रॉयटर्स, 28 नवंबर, 2019, https://reut.rs/34ekfVv 23 दिसंबर, 2021 को एक्सेस किया गया

[73]नेकाटी पोलाट, पृ.सं. 98

[74]गर्गश: एर्दोगन स्प्रेडिंग एमबीएच आइडियोलॉजी इन यूरोप, मस्ट बी कॉन्फ़्रंटेड, ASHARQ AL AWASAT, 2 नवंबर, 2020, https://bit.ly/3ARbWeE 24 जनवरी, 2022 को एक्सेस किया गया

[75]साइमन, पृ.सं. 211

[76]साइमन, पृ.सं. 209

[77]तुर्की के राष्ट्रपति औपचारिक रूप से हागिया सोफिया को एक मस्जिद में फिर से परिवर्तित कर दिया है, टाइम मैगज़ीन, https://bit.ly/3i18wkx 22 दिसंबर, 2022 को 20 जुलाई, 2020, एक्सेस किया गया।

[78]साइमन, पृ.सं. 198

[79]नेकाटी पोलाट, पृ.सं. 88

[80]निकोलस वाट, यूरोप एम्ब्रेस तुर्की एज़ डिप्लोमैटिक डेडलॉक इज ब्रोकन, द गार्जियन, 4 अक्तूबर, 20225, एक्सेस किया गया https://bit. ly/3WIXoHH 22 दिसंबर, 2022

[81]साइमन, पृ.सं. 199

[82]फिलिप गॉर्डन और ओमर टैस्पिनर, तुर्कीये ऑन द ब्रिंक, द वाशिंगटन क्वार्टरली, वॉल्यूम। 29, अंक 3 (समर 2006), पृ.सं. 63